Mains Exam Series

दृष्टि The Vision

विश्व इतिहास

अखिल मूर्ति

द्वितीय संस्करण

Think IAS **दृष्टि** *The Vision* Think Drishti

दृष्टि पब्लिकेशन्स

की आगामी प्रस्तुति

बी.पी.एस.सी.

मुख्य परीक्षा : सामान्य अध्ययन

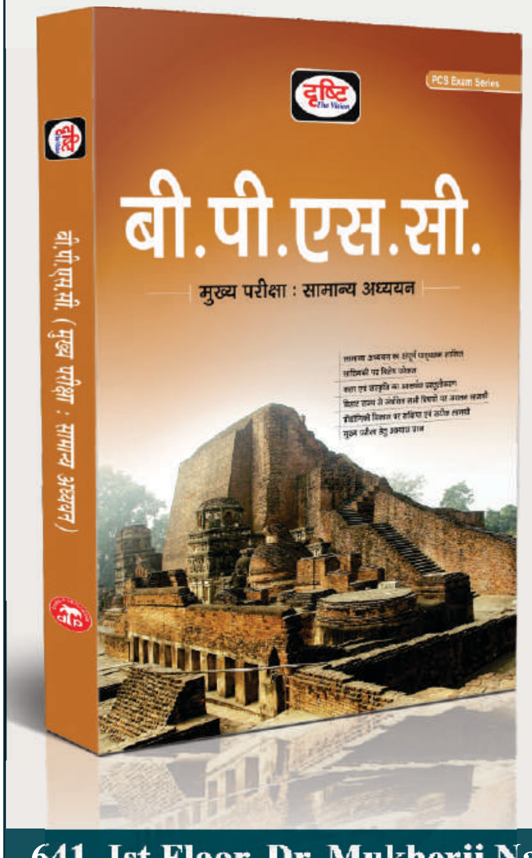

प्रमुख आकर्षण

- सामान्य अध्ययन के संपूर्ण पाठ्यक्रम का समावेशन
- सांख्यिकी पर विशेष फोकस
- कला एवं संस्कृति का आकर्षक प्रस्तुतीकरण
- बिहार राज्य से संबंधित सभी विषयों पर अद्यतन सामग्री
- प्रौद्योगिकी विकास पर संक्षिप्त एवं सटीक सामग्री
- मुख्य परीक्षा हेतु अभ्यास प्रश्न

641, Ist Floor, Dr. Mukherji Nagar, Delhi-9 Ph.: 87501 87501, 011-47532596
E-mail: online@groupdrishti.com, info@drishtiias.com, *Website: www.drishtiias.com

विश्व इतिहास

दृष्टि पब्लिकेशन्स
641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009
दूरभाष: 87501 87501 , 91+ 8448485516, 011-47532596,

Website:
www.drishtipublications.com, www.drishtiias.com
E-mail :
booksteam@groupdrishti.com

द्वितीय संस्करण- अक्तूबर 2019

मूल्य : ₹ 310

प्रकाशक

दृष्टि पब्लिकेशन्स,
(A Unit of VDK Publications Pvt. Ltd.)
641, प्रथम तल,
डॉ. मुखर्जी नगर,
दिल्ली-110009

विधिक घोषणाएँ

* इस पुस्तक में प्रकाशित सूचनाएँ, समाचार, ज्ञान एवं तथ्य पूरी तरह से सत्यापित किये गए हैं। फिर भी, यदि कोई जानकारी या तथ्य गलत प्रकाशित हो गया हो तो प्रकाशक, संपादक या मुद्रक उससे किसी व्यक्ति-विशेष या संस्था को पहुँची क्षति के लिये ज़िम्मेदार नहीं है।

* हम विश्वास करते हैं कि इस पुस्तक में छपी सामग्री लेखकों द्वारा मौलिक रूप से लिखी गई है। अगर कॉपीराइट उल्लंघन का कोई मामला सामने आता है तो प्रकाशक को ज़िम्मेदार नहीं ठहराया जाएगा।

* सभी विवादों का निपटारा दिल्ली न्यायिक क्षेत्र में होगा।

* © **कॉपीराइट :** दृष्टि पब्लिकेशन्स (A Unit of VDK Publications Pvt. Ltd.), सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी अंश का प्रकाशन अथवा उपयोग, प्रतिलिपीकरण, ऐसे यंत्र में भंडारण जिससे इसे पुनः प्राप्त किया जा सकता हो या स्थानान्तरण, किसी भी रूप में या किसी भी विधि से (इलेक्ट्रॉनिक, यांत्रिक, फोटो-प्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग या किसी अन्य प्रकार से) प्रकाशक की पूर्वानुमति के बिना नहीं किया जा सकता।

* एम.पी. प्रिंटर्स, बी-220, फेज़-2, नोएडा (उत्तर प्रदेश) से मुद्रित।

दो शब्द

प्रिय पाठको,

लंबे समय तक अध्ययन-अध्यापन करने के दौरान मैंने इस बात को गहराई से महसूस किया कि विश्व इतिहास से संबंधित पुस्तकों में एक स्पष्ट विभाजन है। एक तरफ विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रमों में शामिल पुस्तकें हैं जो गहन शोध और अकादमिक अनुभव से तैयार की गई हैं तो दूसरी तरफ प्रतियोगी परीक्षाओं के लिये विशिष्ट रूप से प्रकाशित पुस्तकें हैं। पहली प्रकार की पुस्तकें जहाँ भाषा की जटिलता, ऐतिहासिक संदर्भों की प्रचुरता, लेखक के दृष्टिकोण तथा इतिहास लेखन की स्वाभाविक उलझनों के कारण प्रतियोगी अभ्यर्थियों के लिये कठिनाइयाँ उत्पन्न करती हैं, वहीं दूसरी प्रकार की पुस्तकों में सरलता के नाम पर ऐसी स्तरहीन सामग्री प्रस्तुत कर दी जाती है कि उसे पढ़ने से समय बर्बाद होने के अलावा अन्य कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हो पाता। इसलिये एक लेखक के रूप में मेरी प्रारंभिक चुनौती यही थी कि कैसे विषय की गंभीरता और अकादमिक गुणवत्ता से समझौता किये बिना सहज और सुबोध ढंग से परीक्षोपयोगी पुस्तक तैयार की जाए।

इस चुनौती से निपटने के लिये मैंने कुछ ऐसे सूत्रों का सहारा लिया जिससे आपकी राह आसान हो जाए। विषय पर भाषा हावी न हो जाए इसलिये पाठ की गंभीरता के अनुरूप ही भाषायी प्रवाह को समायोजित किया गया है। इस प्रकार यह पुस्तक आपके लिये सहज ग्राह्य हो सकेगी। फिर ऐतिहासिक संदर्भों और इतिहास लेखन की जटिलताओं से वहीं आपका परिचय कराया गया है जहाँ ऐसा करना अपरिहार्य था अन्यथा सर्वप्रचलित पाठ को ही प्रस्तुत किया गया है जिससे आपके उत्तर लेखन में स्पष्टता हो।

इस पुस्तक को लिखते समय दूसरी बड़ी चुनौती यह थी कि संपूर्ण पाठ्यक्रम शामिल करने की अनिवार्य विवशता में कहीं पुस्तक का आकार इतना बड़ा न हो जाए कि इसे आद्योपांत पढ़ पाना ही एक चुनौती बन जाए। बाज़ार में ऐसी कई पुस्तकें हैं जो सब कुछ शामिल कर लेने की असंभव-सी ज़िद के कारण इतनी विस्तृत हैं कि परीक्षा के लिहाज़ से अनुपयोगी हो जाती हैं। मैंने एक पुस्तक में सब कुछ आरोपित न कर पाने की सीमा को स्वीकार किया और सभी महत्त्वपूर्ण मुद्दों को शामिल करने की नीति का अनुपालन करते हुए पुस्तक के आकार को 250 से 300 पन्नों तक बांधने का निश्चय किया ताकि इसे पढ़ने और रिवीज़न करने में आसानी हो।

पहले प्रारूप में जब पुस्तक इस सीमा का अतिक्रमण कर रही थी तो कुछ अध्यायों को दुबारा लिखा गया। 'सभी महत्त्वपूर्ण' मुद्दे शामिल हो सकें, इसके लिये बीते वर्षों के दौरान पूछे गए प्रश्नों तथा उपलब्ध मानक पुस्तकों को आधार बनाते हुए इतिहास के शोधार्थियों से खूब विचार-विमर्श किया गया। कई स्तरों की श्रमसाध्य सहमति-असहमति के बाद ही विषय सूची का निर्धारण हो सका तथा पाठ की रूपरेखा तैयार हो पाई। इसलिये आप पुस्तक में पाएंगे कि कुछ विषयों पर जहाँ विस्तार से लिखा गया है वहीं कुछ का विवरण अत्यंत संक्षेप में है। दरअसल, यह अंतर विषय के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए सायास रूप से किया गया है। जो विषय परीक्षा के लिहाज़ से अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं उन्हें अपेक्षित विस्तार के साथ लिखा गया है और जो बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं हैं किंतु तारतम्यता के लिये जिनका उल्लेख ज़रूरी है उन्हें संक्षेप में लिखा गया है।

इतिहास में तथ्यों की प्रामाणिकता सबसे बुनियादी बात है। तथ्यात्मक त्रुटि न केवल पाठ की विश्वसनीयता कम करती है बल्कि इससे अध्ययन का सौंदर्य भी कलुषित हो जाता है। इसलिये पुस्तक के तथ्यों को विशेषज्ञों की एक पूरी टीम ने कई बार जाँचा है। फिर तथ्यों की मात्रा को भी विषय की मांग के अनुरूप ही रखा गया है ताकि विषय का मर्म तथ्यों की बोझिलता से कमज़ोर न हो जाए। यह पुस्तक मूलतः प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर रहे अभ्यर्थियों के लिये लिखी गई है किंतु साथ ही यह विश्वविद्यालयी छात्र-छात्राओं तथा विश्व इतिहास में रुचि रखने वाले सुधि पाठकों के लिये भी समान रूप से उपयोगी होगी।

अब दूसरे संस्करण के रूप में यह पुस्तक पुनः आपके सम्मुख उपस्थित है। आपकी सकारात्मक प्रतिक्रियाओं ने मेरे लेखकीय दायित्व को और सघन कर दिया है। साथ ही आपके सुझावों के आधार पर पुस्तक को परिवर्द्धित कर दिया गया है। अंत में इसे तैयार करने- ड्राफ्ट पढ़ने, संपादन करने, प्रूफिंग करने, में सहयोग करने वाले सभी साथियों का आभार। आपके सहयोग के बिना इसे पूरा कर पाना संभव न हो पाता। आप पाठकगण इसे पढ़ें और अपनी बात हमसे कहें। आपकी प्रशंसा हमारा उत्साह बढ़ाएगी और आलोचना हमें आत्मविश्लेषण के लिये प्रेरित करेगी। **आप अपना सुझाव बेझिझक '8130392355' नंबर पर वाट्सएप मैसेज से भेज दें।** आपकी टिप्पणियों के आधार पर हम पुस्तक के आगामी संस्करणों को और बेहतर बना सकेंगे।

शुभकामनाओं सहित

संपादक

दृष्टि पब्लिकेशन्स

अनुक्रम

1. पुनर्जागरण, धर्मसुधार व वाणिज्यवाद 1-19

- पुनर्जागरण 1
  - पृष्ठभूमि
  - अर्थ
  - पुनर्जागरण के कारण
  - पुनर्जागरण का सूत्रपात इटली से ही क्यों?
  - पुनर्जागरण का स्वरूप/विशेषताएँ/तत्त्व
  - पुनर्जागरण की अभिव्यक्ति का विभिन्न क्षेत्रों में प्रभाव/परिणाम
  - पुनर्जागरण के संबंध में कतिपय विवाद
- यूरोप में धर्म सुधार आंदोलन 10
  - यूरोप में धर्म सुधार आंदोलन के कारण
  - धर्म सुधार आंदोलन का प्रभाव
  - तीस वर्षीय युद्ध एवं वेस्टफेलिया की संधि
- वाणिज्यवाद 14
  - वाणिज्यवाद की उत्पत्ति एवं परिभाषा
  - वाणिज्यवाद के उदय के कारण
  - वाणिज्यवाद के परिणाम एवं मूल्यांकन
  - वाणिज्यवाद की सीमाएँ
  - वाणिज्यवाद का पतन

2. प्रबोधन एवं आधुनिक विचार 20-31

- प्रबोधन का युग 20
  - प्रबोधन की विशेषताएँ
  - प्रबोधनकाल के प्रमुख विचारक
  - उपनिवेशों में प्रबोधन का प्रसार
  - प्रबोधन का प्रभाव
  - प्रबोधन की सीमाएँ
  - पुनर्जागरण एवं प्रबोधनयुगीन चिंतन में अंतर
  - समाजवादी विचारों का उद्‌भव (मार्क्स तक)
  - मार्क्स के पश्चात् यूरोप में समाजवाद की प्रगति

3. आधुनिक राजनीति के मूल स्रोत 32-71

- अमेरिकी क्रांति एवं संविधान 32
  - क्रांति से पूर्व अमेरिका की स्थिति
  - अमेरिका में यूरोपीयों के बसने के कारण
  - अमेरिकी क्रांति के कारण
  - इंग्लैंड की असफलता के कारण
  - अमेरिकी क्रांति के प्रभाव/परिणाम
  - अमेरिकी क्रांति की प्रकृति
  - अमेरिकी संविधान का निर्माण
  - अमेरिकी संविधान के प्रमुख प्रावधान
  - अमेरिकी संविधान का महत्त्व
  - अमेरिकी संविधान की प्रमुख विशेषताएँ
- अब्राहम लिंकन के संदर्भ में अमेरिकी सिविल युद्ध एवं दासता का उन्मूलन 42
  - अमेरिकी गृहयुद्ध के कारण
  - गृहयुद्ध के दौरान लिंकन की भूमिका
  - अमेरिकी गृहयुद्ध के परिणाम/प्रभाव
- फ्राँसीसी क्रांति एवं उसके परिणाम 44
  - क्रांति के लिये उत्तरदायी परिस्थितियाँ (कारण)
  - क्रांति में विचारकों की भूमिका
  - फ्राँस की क्रांति के विभिन्न चरण
  - फ्राँसीसी क्रांति का स्वरूप/प्रकृति
  - फ्राँसीसी क्रांति : परिणाम/उपलब्धियाँ
  - फ्राँसीसी क्रांति में महिलाओं की भूमिका
  - नेपोलियन बोनापार्ट
  - नेपोलियन के उदय में सहायक परिस्थितियाँ
  - नेपोलियन के सुधार
  - नेपोलियन का विजय अभियान
  - महाद्वीपीय व्यवस्था
  - नेपोलियन युग का पतन
- वियना कॉन्ग्रेस और मैटरनिक 64
- इंग्लैंड में चार्टिस्ट आंदोलन 68
  - पृष्ठभूमि एवं कारण
  - 1867 का सुधार अधिनियम
  - 1884 का सुधार अधिनियम
  - 1911 का सुधार अधिनियम

4. औद्योगीकरण 72-81

- औद्योगिक क्रांति 72
  - अर्थ
  - क्रांति के कारण
  - औद्योगिक क्रांति का प्रारंभ इंग्लैंड से ही क्यों?
  - औद्योगिक क्रांति : क्रांति या क्रमिक विकास का परिणाम?
  - औद्योगिक क्रांति : परिणाम/प्रभाव
- औद्योगीकरण एवं भूमंडलीकरण 76
- विभिन्न देशों में औद्योगीकरण 78

5. राष्ट्र-राज्य प्रणाली 82-102

- इटली में राज्य निर्माण 82
  - इटली के एकीकरण में बाधाएँ
  - इटली के एकीकरण में सहायक तत्त्व
  - एकीकरण के विभिन्न चरण
  - इटली के एकीकरण में मेजिनी की भूमिका
  - काबूर की भूमिका
  - गैरीबाल्डी की भूमिका
  - विक्टर एमैनुएल द्वितीय की भूमिका
- जर्मनी में राज्य निर्माण 90
  - पृष्ठभूमि
  - एकीकरण में बाधक तत्त्व
  - एकीकरण में सहायक तत्त्व
  - एकीकरण की प्रक्रिया
  - सेडोवा का युद्ध
  - सेडान का युद्ध तथा फ्रैंकफर्ट की संधि
  - बिस्मार्क एवं उसकी नीतियाँ
- पूर्वी समस्या एवं क्रीमिया का युद्ध 98
  - कारण
  - क्रीमिया युद्ध के परिणाम
  - बर्लिन कॉन्ग्रेस
  - बर्लिन कॉन्ग्रेस की समीक्षा

6. साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद 103-112

- यूरोपीय नवीन साम्राज्यवाद का स्वरूप (1870-1945) 103
  - नवीन साम्राज्यवाद के प्रेरक तत्त्व
  - उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद में अंतर
  - दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्वी एशिया
  - साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का प्रभाव
  - साम्राज्यवाद एवं मुक्त व्यापार
  - नव-साम्राज्यवाद

7. क्रांति एवं प्रतिक्रांति 113-146

- 19वीं सदी की यूरोपीय क्रांतियाँ 113
  - 1830 की क्रांति
  - 1848 की क्रांति
  - यूरोपीय देशों पर 1848 की क्रांति का प्रभाव
  - 1848 की क्रांति के परिणाम और महत्त्व
  - 1830 एवं 1848 की क्रांतियों की तुलना
- रूसी क्रांति (1917) 118
  - रूसी क्रांति के कारण
  - अक्तूबर/नवंबर 1917 की क्रांति - बोल्शेविक क्रांति
  - रूसी क्रांति : परिणाम/प्रभाव/महत्त्व
  - लेनिन एवं बोल्शेविक क्रांति
  - लेनिन की समाजवादी विचारधारा
  - लेनिन के कार्य
  - युद्ध साम्यवाद (1918-1921)
  - नई आर्थिक नीति
  - स्टालिन : नीतियाँ एवं कार्य
  - फ्राँस एवं रूस की क्रांति की तुलना
- इटली में फासीवाद 127
  - फासीवाद के उद्भव के कारण
  - फासीवाद के स्रोत
  - फासीवाद के सिद्धांत
  - मुसोलिनी का उदय
  - मुसोलिनी की गृह नीति
  - सिंडिकेट व्यवस्था
  - निगमित राज्य
  - मुसोलिनी की विदेश नीति
- जर्मनी में नाज़ीवाद 133
  - वाइमर गणतंत्र एवं संविधान की विशेषताएँ
  - वाइमर संविधान की सीमाएँ
  - जर्मनी में नाज़ीवाद/हिटलर के उदय के कारण
  - नाज़ीवादी विचारधारा
  - हिटलर की गृह नीति
  - हिटलर की वैदेशिक नीति की अभिव्यक्ति
  - चेकोस्लोवाकिया एवं म्यूनिख पैक्ट
  - रूस-जर्मन अनाक्रमण संधि
  - पोलैंड पर आक्रमण एवं द्वितीय विश्वयुद्ध की शुरुआत
- चीनी साम्यवादी क्रांति-1949 142
  - पृष्ठभूमि
  - क्रांति की परिस्थितियाँ एवं विकास
  - साम्यवादियों की सफलता के कारण
  - चीनी क्रांति : परिणाम/प्रभाव

8. प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध 147-176

- प्रथम विश्वयुद्ध 147
  - पृष्ठभूमि
  - प्रथम विश्वयुद्ध के कारण
  - प्रथम विश्वयुद्ध : परिणाम/प्रभाव

➢ पेरिस शांति सम्मेलन
➢ विल्सन के 14 सूत्र
➢ वर्साय की संधि
➢ वर्साय की संधि के प्रावधान
➢ वर्साय की संधि का मूल्यांकन
➢ वर्साय की संधि एवं द्वितीय विश्वयुद्ध

- **द्वितीय विश्वयुद्ध** 158
  ➢ द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण
  ➢ द्वितीय विश्वयुद्ध के चरण
  ➢ द्वितीय विश्वयुद्ध : परिणाम/प्रभाव
  सर्वांगीण युद्ध के रूप में प्रथम विश्वयुद्ध: सामाजिक निहितार्थ

- **दो विश्वयुद्धों के बीच के घटनाक्रम** 167
  ➢ प्रथम विश्वयुद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में सुधार के प्रयास
  ➢ दो विश्वयुद्धों के मध्य फ्राँस और जर्मनी के संबंध
  ➢ दो विश्वयुद्धों के मध्य अमेरिकी पार्थक्यवाद
  ➢ प्रथम विश्वयुद्ध के बाद निशस्त्रीकरण
  ➢ महान आर्थिक मंदी
  ➢ आर्थिक मंदी का प्रसार
  ➢ आर्थिक मंदी से उबरने के प्रयास
  ➢ आर्थिक मंदी के परिणाम
  ➢ न्यू डील नीति

9. द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद का विश्व 177-221

- **शीत युद्ध** 177
  ➢ दो शक्तियों का आविर्भाव
  ➢ शीत युद्ध का अर्थ
  ➢ शीत युद्ध की प्रकृति/विशेषताएँ
  ➢ शीत युद्ध के विशिष्ट साधन
  ➢ शीत युद्ध के कारण
  ➢ शीत युद्ध का उत्तरदायित्व
  ➢ शीत युद्ध की प्रगति एवं विस्तार
  ➢ देतांत या तनाव शैथिल्य
  ➢ शीत युद्ध का अंत
  ➢ शीत युद्ध के अंत के कारण
  ➢ शीत युद्ध की समाप्ति का प्रभाव

- **तृतीय विश्व व गुटनिरपेक्ष आंदोलन** 191
  ➢ तृतीय विश्व का उद्भव
  ➢ तृतीय विश्व की विशेषताएँ
  ➢ तृतीय विश्व की भूमिका
  ➢ गुटनिरपेक्षता का अर्थ एवं परिभाषा
  ➢ गुटनिरपेक्षता नीति अपनाने के कारण
  ➢ गुटनिरपेक्ष आंदोलन की उपलब्धियाँ
  ➢ गुटनिरपेक्ष आंदोलन की असफलताएँ
  ➢ भारत द्वारा गुटनिरपेक्ष नीति अपनाने के कारण
  ➢ नवीन चुनौतियाँ
  ➢ गुटनिरपेक्षता का भविष्य : प्रासंगिकता

- **संयुक्त राष्ट्र संघ** 200
  ➢ विवादों का शांतिपूर्ण समाधान एवं युद्ध के नियम
  ➢ UNO की पृष्ठभूमि एवं निर्माण
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ के अंग
  ➢ सुरक्षा परिषद् में वीटो (निषेधाधिकार) के प्रयोग पर विवाद
  ➢ वित्तीय एवं आर्थिक संस्थाएँ
  ➢ राष्ट्र संघ एवं संयुक्त राष्ट्र संघ : तुलनात्मक अध्ययन
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ एवं वैश्विक विवाद
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ एवं मानव अधिकार
  ➢ महासचिव की भूमिका
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ और तीसरी दुनिया
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ की उपलब्धियाँ
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ की असफलताएँ
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ में भारत की भूमिका
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ के समक्ष नई चुनौतियाँ
  ➢ संयुक्त राष्ट्र संघ का भविष्य

10. औपनिवेशिक शासन से मुक्ति 222-238

- **अरब विश्व : मिस्र** 222
  ➢ पृष्ठभूमि
  ➢ यूरोपीय शक्तियों का प्रवेश
  ➢ मुहम्मद अली (मेहमत अली)
  ➢ प्रथम विश्वयुद्ध एवं मिस्र
  ➢ पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्ति

- **अरब राष्ट्रवाद का उदय** 225
  ➢ अरब लीग

- **अफ्रीका : रंगभेद से गणतंत्र तक** 226
  ➢ पृष्ठभूमि
  ➢ पार्थक्यता या रंगभेद की नीति

- **लैटिन अमेरिका एवं साइमन बोलीवर** 229
  ➢ स्वतंत्रता संघर्ष/विद्रोहों को प्रेरित करने वाले कारक

- **दक्षिण-पूर्व एशिया : वियतनाम** 234
  - पृष्ठभूमि
  - हिंद-चीन में फ्राँसीसी प्रभुत्व की स्थापना

11. विऔपनिवेशीकरण एवं अल्प विकास 239-241

  - उपनिवेशवाद की समाप्ति के लिये ज़िम्मेदार कारक
- **विकास में बाधक कारक : लैटिन अमेरिका एवं अफ्रीका** 240

12. यूरोप का एकीकरण 242-251

  - यूरोपीय पारंपरिक एकता को नुकसान पहुँचाने वाले तत्त्व
  - यूरोप के एकीकरण की दिशा में किये गए प्रयास
- **उत्तर अटलांटिक संधि संगठन (NATO)** 243
  - नाटो का उद्देश्य
  - नाटो की संरचना
  - शीत युद्धकाल में नाटो की स्थिति
  - शीत युद्धकाल में नाटो का प्रभाव
  - शीत युद्धोत्तरकालीन नाटो
  - नाटो के सैन्य अभियान
  - नाटो की प्रासंगिकता
- **यूरोपीय समुदाय** 246
  - यूरोपीय समुदाय की स्थापना
  - यूरोपीय समुदाय का मूल्यांकन
- **यूरोपीय संघ** 247
  - यूरोपीय संघ के विस्तार में बाधाएँ
  - यूरोपीय संघ का विस्तार
  - यूरोपीय संघ के प्रमुख कार्य
  - यूरोपीय संघ की वर्तमान स्थिति
  - ब्रिटेन के यूरोपियन यूनियन से बाहर निकलने के कारण

13. सोवियत संघ का विघटन एवं एकध्रुवीय विश्व 252-264

- **सोवियत संघ का विघटन** 252
  - पृष्ठभूमि
  - विघटन के कारक
  - सोवियत संघ के विघटन में गोर्बाचेव की भूमिका
  - सोवियत संघ के विघटन के प्रभाव
- **पूर्वी यूरोप में राजनीतिक परिवर्तन (1989-2001)** 256
  - पृष्ठभूमि
  - परिवर्तन के कारक
  - घटनाक्रम
- **शीत युद्ध की समाप्ति तथा अमेरिकी प्रभुत्व** 261
  - पृष्ठभूमि
  - शीत युद्ध के अंत के समय वैश्विक परिदृश्य
  - अमेरिकी प्रभुत्व के स्वरूप

1

पुनर्जागरण, धर्मसुधार एवं वाणिज्यवाद
Renaissance, Reformation and Mercantilism

पुनर्जागरण

पृष्ठभूमि

पुनर्जागरण सामाजिक सुधार और आधुनिक चेतना संपन्न एक महत्त्वपूर्ण कालखंड का पर्याय है। पुनर्जागरण के मूल में धार्मिक सुधार, वैज्ञानिक विचार और आधुनिक चिंतन का मौलिक समन्वय है। यह भाववादी चिंतन के स्थान पर तार्किक चिंतन का परिणाम है। इसकी शुरुआत पंद्रहवीं शताब्दी से मानी जाती है। वस्तुत: प्रारंभ से पाँचवीं सदी तक का काल यूरोप में प्राचीन अथवा पुरातन काल के नाम से जाना जाता है। प्राचीन काल में मानव जीवन सुखमय था, मनुष्यों पर धर्म का प्रभाव स्थापित नहीं हुआ था तथा मानव समाज में सामंतवादी व्यवस्था का पूर्णत: अभाव था। कुल मिलाकर हम यह कह सकते हैं कि प्राचीन काल मनुष्य की खुशहाली एवं गौरव का काल था। यह काल रोम एवं यूनान की उन्नति का भी काल था। लेकिन तीसरी शताब्दी में रोम साम्राज्य का दो भागों-पूर्वी रोमन साम्राज्य एवं पश्चिमी रोमन साम्राज्य में विभाजन हो गया। पूर्वी रोमन साम्राज्य की राजधानी कुस्तुनतुनिया, जबकि पश्चिमी रोमन साम्राज्य की राजधानी रोम को बनाया गया। फिर पश्चिमी रोमन साम्राज्य पर हो रहे निरंतर जर्मन आक्रमण ने पाँचवीं सदी तक इसका भी विघटन कर दिया। फलत: यूरोप में यहीं से सामंतवाद की शुरुआत हुई। वहीं पूर्वी रोमन साम्राज्य का अस्तित्व 1453 ई. तक बना रहा।

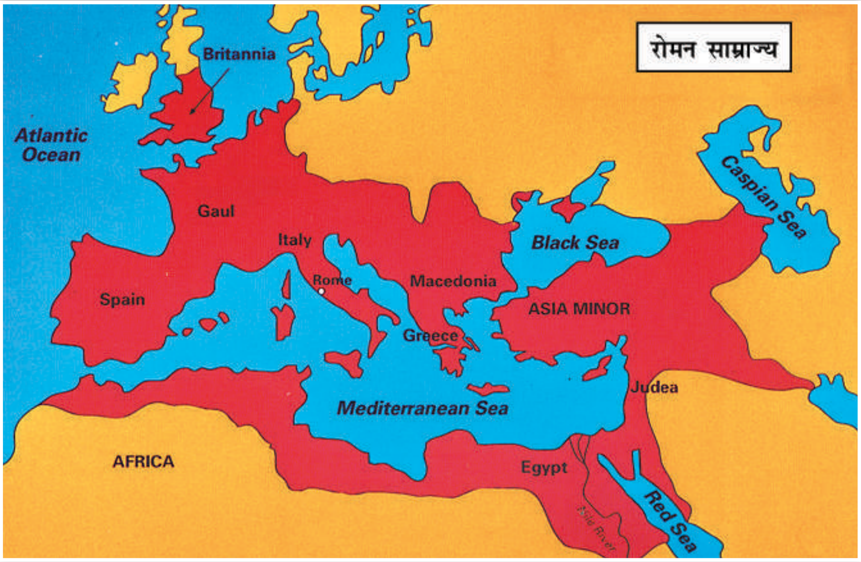

यूनानी एवं रोमन संस्कृतियों के पतन के साथ ही मध्ययुग का आरंभ होता है। विश्व इतिहास में मध्ययुग का कालखंड 5वीं शताब्दी से 15वीं शताब्दी तक माना जाता है। इसे 'अंधकार का युग' भी कहते हैं, क्योंकि इस काल में यूरोप में सामंती व्यवस्था स्थापित हो चुकी थी, बौद्धिक प्रगति एवं वैचारिक स्वतंत्रता का मार्ग अवरुद्ध हो गया था तथा मानव जीवन में धर्म का प्रभाव अत्यधिक बढ़ गया था। दूसरे शब्दों में कहें तो मनुष्य जन्म से मृत्यु तक धार्मिक आडंबरों एवं क्रियाकलापों से बँधकर परलोक को अधिक महत्त्व देने लगा था। इस तरह राजनीतिक क्षेत्र में निरंकुश राजतंत्र एवं सामंतोवाद का वर्चस्व, धार्मिक क्षेत्र में पवित्र रोमन साम्राज्य एवं चर्च की महत्ता, सामाजिक क्षेत्र में विशेषाधिकार एवं विशेषाधिकारविहीन वर्गों का अस्तित्व तथा आर्थिक क्षेत्र में उत्पादन की गिल्ड श्रेणी और मेनर प्रणाली की जकड़न एवं स्थापत्य में गोथिक शैली का एकाधिकार स्थापित था।

अर्थ

पुनर्जागरण यूरोप में एक सामाजिक-सांस्कृतिक आंदोलन के रूप में आरंभ हुआ, इसीलिये इसे मध्यकाल एवं आधुनिक काल के बीच एक सांस्कृतिक सेतु के रूप में देखा जाता है। पुनर्जागरण के माध्यम से सभ्यता, संस्कृति एवं ज्ञान का नया स्वरूप सामने आया। वस्तुत: 14वीं से 16वीं सदी के बीच यूरोप में एक नवीन चेतना का विकास हुआ, जिसे पुनर्जागरण के नाम से जाना गया। पुनर्जागरण के भिन्न-भिन्न अर्थ दिये गए हैं, जैसे- पुनर्जन्म, बौद्धिक जागरण, पुनरुत्थान, सांस्कृतिक जागरण, सांस्कृतिक नवजागरण आदि। वास्तव में पुनर्जागरण का अंग्रेज़ी पर्याय 'रिनेसाँ' (Renaissance) फ्राँसीसी शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ है पुनर्जन्म या 'फिर से जागना'। ध्यान रहे, यह किसी सोए हुए व्यक्ति का निद्रा से जागना नहीं है, अपितु काल-विशेष में समस्त मानव समाज का चेतना संपन्न होना है। उल्लेखनीय है कि पाँचवीं-छठी शताब्दी ईसा पूर्व में यूनानी-रोमन साम्राज्य में सुकरात, प्लेटो, अरस्तू, पाइथागोरस जैसे अनेक विचारकों ने मानव विकास के अनेक आयामों को प्रस्तुत किया था, जिनका मध्यकाल में पतन हो गया था। वे पुन: 13वीं सदी के बाद

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण प्रश्न

1. "मुक्त व्यापारियों के तर्क आर्थिक दृढ़-निश्चितता, सामाजिक हितकारिता, सर्वदेशीय आदर्शवाद एवं वर्ग पूर्वाग्रह का विलक्षण मिश्रण थे।" समालोचनात्मक परीक्षण कीजिये। *IAS, 2019*
2. "पुनर्जागरण संसार और मानव की खोज थी।" *IAS, 2002; 1990*
3. "पुनर्जागरण द्वारा संसार और मानव के प्रति जो रुचि जगी उसी का दूसरा पक्ष था- खोजों एवं अनुसंधानों का युग।" टिप्पणी कीजिये। *IAS, 1996*
4. "मानवतावाद पुनर्जागरण का स्रोत एवं परिणाम दोनों था।" टिप्पणी कीजिये। *UPPSC, 2000*
5. यूरोप के पुनर्जागरण के मुख्य लक्षणों की विवेचना कीजिये। *UPPSC, 1993*
6. इटली मे पुनर्जागरण के उद्‌भव के कारण बताइये। *IAS, 2007*
7. पुनर्जागरण के स्वरूप का निर्धारण कीजिये।
8. विभिन्न क्षेत्रों में पुनर्जागरण की अभिव्यक्ति को रेखांकित कीजिये।
9. "पुनर्जागरणकालीन विद्वानों ने अंडे दिये थे, जिनको बाद में धर्म सुधार आंदोलन के जनक मार्टिन लूथर ने सेआ था।" चर्चा कीजिये। *IAS, 2006*
10. ''पुनर्जागरण राजनीतिक अथवा धार्मिक आंदोलन नहीं था। वह एक मनोदशा थी। टिप्पणी कीजिये। *IAS, 1994*
11. 'यूरोप के समुद्रपार विस्तार के प्रायोजक राष्ट्रीय राजतंत्र थे।' समीक्षा कीजिये। *IAS, 1992*
12. सांस्कृतिक पुनर्जागरण से आप क्या समझते हैं? इसकी परिस्थितियाँ बताते हुए इनके प्रमुख लक्षण अथवा विशेषताएँ बताइये। *UPPSC, 2005*
13. पुनर्जागरण से आप क्या समझते हैं? इसकी प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिये। *UPPSC, 2010*
14. "पुनर्जागरण और सुधार आंदोलन आधुनिक इतिहास में बौद्धिक और नैतिक जीवन के नवीनीकरण के लिये दो प्रतिस्पर्धी स्रोत हैं।" टिप्पणी कीजिये। *IAS, 1995*
15. यूरोप में पंद्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियों में जो बौद्धिक चेतना घटित हुई उसका मूल्यांकन कीजिये। इसने आधुनिक समाज और सभ्यता को किस प्रकार प्रभावित किया? *IAS, 1993*
16. सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दियों के दौरान वैज्ञानिक ज्ञान का विकासक्रम किस हद तक परिवर्तनशील समाज की आवश्यकताओं की उपज थी? *IAS, 1994*
17. यद्यपि धर्म सुधार आंदोलन ने आधुनिक विश्व के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, लेकिन इसका एक स्वाभाविक परिणाम असहिष्णुता में वृद्धि था। टिप्पणी कीजिये।
18. यूरोप में धर्म सुधार आंदोलन के कारणों की विवेचना कीजिए। इसमें मार्टिन लूथर किंग की भूमिका पर भी प्रकाश डालिये।
19. प्रति धर्म सुधार आंदोलन की पृष्ठभूमि में धर्म सुधार आंदोलन की विवेचना कीजिये।
20. "प्रोटेस्टेंट धर्म सुधार द्वारा अपनाए गए विभिन्न स्वरूपों में काल्विनवाद का विस्तार सबसे व्यापक और इसका प्रभाव सबसे अधिक गहरा था।" *IAS, 2000*
21. धर्म सुधार आंदोलन के कारण एवं प्रभावों पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिये।
22. यूरोप की प्रगतिशीलता में धर्म सुधार आंदोलन की भूमिका का परीक्षण कीजिये।
23. धर्म सुधार आंदोलन तात्कालिक यूरोप को रूढ़िमुक्त करने में कहाँ तक सफल रहा? विवेचना कीजिये।
24. तीस वर्षीय युद्ध के कारणों का विवेचन कीजिये और वेस्टफेलिया की संधि की मुख्य विशेषताओं का विवरण दीजिये। *UPPSC, 1999*
25. 'धर्म सुधार धार्मिक पुनरुत्थान तथा ईसाई चर्च की मूल परंपराओं की पुन: प्राप्ति का प्रयास।' टिप्पणी लिखिये। *UPPSC, 2001*
26. 'उसका (मार्टिन लूथर का) विद्रोह मूलत: राष्ट्रीय और लोकप्रिय था।' समीक्षा कीजिये। *IAS, 1991*
27. 'वेस्टफेलिया की शांति-संधि ने यूरोपीय मन पर धर्मदर्शन के शासन को समाप्त कर दिया और यद्यपि इसने मार्ग को बाधापूर्ण छोड़ दिया, परंतु वह तर्कबुद्धि के अवेक्षकों को लिये सुगम बन गया।' *IAS, 1997*
28. 'तीस वर्षीय युद्ध से अंतत: यूरोप की आधुनिक राज्य पद्धति विकसित हुई।' क्या आप इस मत से सहमत है? *IAS, 1992*
29. तीस वर्षीय युद्ध 1618-1648 तत्वत: बूर्बो और हैप्सबर्ग घराने में यूरोप के महाद्वीप पर प्रभुत्व के लिये संघर्ष था, इस मत का परीक्षण कीजिये। *IAS, 1988*
30. वाणिज्यवाद से आप क्या समझते है? इसके उदय के कारणों की समीक्षा कीजिये।
31. वाणिज्यवाद युग की एक लोकप्रिय विचारधारा रही है। इस कथन के आलोक में वाणिज्यवाद का मूल्यांकन कीजिये।
32. वाणिज्यवाद के पतन के कारकों पर प्रकाश डालिये।
33. वाणिज्यवाद से आपका क्या तात्पर्य है? उसकी प्रमुख विशेषताओं की विवेचना कीजिये। *UPPSC, 2000*
34. "सोलहवीं शताब्दी के वाणिज्यवाद की नवीनता थी नगर से राष्ट्र तक इसका विस्तार और स्थानीय श्रेणी (गिल्ड) से राष्ट्रीय राजा तक इसके प्रधान माध्यम (एजेंसी) का स्थानांतरण।" *IAS, 1986*
35. "सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में पश्चिमी यूरोप के अधिकांश राष्ट्रों के इतिहास की विशेषता थी वाणिज्यवादी सिद्धांतों को व्यवहार में लाने के प्रयास।" *IAS, 1998*

2

प्रबोधन एवं आधुनिक विचार
Enlightenment and Modern Ideas

प्रबोधन का युग

यूरोप में 17वीं एवं 18वीं सदी में हुई बौद्धिक क्रांति तथा इसके फलस्वरूप हुए परिवर्तनों के कारण इस काल को प्रबोधन, ज्ञानोदय या विवेक का काल कहा जाता है। प्रबोधन से तात्पर्य है गहन अंधकार काल से ज्ञान के प्रकाश की ओर आना। गहन अंधकार का अर्थ है असहिष्णुता, अंधविश्वास, संकीर्ण चिंतन और बीमार मानसिकता। प्रबोधन का आधार पुनर्जागरणकालीन मध्य वर्ग ने तैयार किया जिसे औद्योगिक क्रांति पूर्व युग का बुर्जुआ वर्ग कह सकते हैं। वाणिज्यवादी हितों से संचालित इस वर्ग (मध्य वर्ग) ने राजतंत्रवादी हस्तक्षेप एवं चर्च के भ्रष्ट संगठन वर्ग को चुनौती दी। वस्तुतः इस बौद्धिक क्रांति का आधार पुनर्जागरण, भौगोलिक खोजों तथा धर्म सुधार आंदोलनों ने तैयार किया था। इस काल में पारंपरिक चिंतन का अंत तथा आधुनिक वैज्ञानिक सोच का जन्म हुआ। फिर वैज्ञानिक चिंतन की पद्धति और तर्क एवं अन्वेषण ने इस काल तक परिपक्वता प्राप्त कर ली थी। फलतः जगत संबंधी आधुनिक दृष्टिकोण का विकास हुआ। इस काल के चिंतकों का ऐसा मानना था कि भौतिक जगत और प्रकृति में घटने वाली घटनाओं के पीछे किसी व्यवस्थित, अपरिवर्तनशील एवं प्राकृतिक नियम का हाथ है।

18वीं सदी का काल यूरोप में आधुनिक काल के रूप में भी देखा जाता है। इस काल में महत्त्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन हुए, जैसे- सामंती सामाजिक ढाँचे का स्थान औद्योगिक समाज लेने लगा, अर्थव्यवस्था का विस्तार हुआ तथा जनसंख्या व अनाज के उत्पादन के बीच संतुलन पुनःस्थापित होने से दीर्घकालीन विकास आरंभ हुआ। आर्थिक-सामाजिक परिवर्तन से राजनीतिक परिवर्तन की स्थिति उत्पन्न हो गई। फलस्वरूप नए-नए राजनीतिक सिद्धांतों को अपनाया जाने लगा, जैसे- उदारवाद, गणतंत्रवाद, राष्ट्रवाद, मानवाधिकार, समानता, समाजवाद, भाईचारा आदि। इन परिवर्तनों ने पुरानी राज्य व्यवस्था के औचित्य को चुनौती देना शुरू किया। यही कारण है कि प्रशा के फ्रेडरिक महान, रूस की महारानी कैथरीन, ऑस्ट्रिया-हंगरी की मारिया थेरेसा तथा रोम के जोसेफ द्वितीय जैसे शासकों ने अपने शासन को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया तथा प्रबुद्धवादी विचारों, यथा- राज्य का धर्मनिरपेक्षीकरण, चर्च की महत्ता में कमी, कुलीनों के विशेषाधिकारों में कमी, कृषि एवं उद्योगों को बढ़ावा, जन कल्याणकारी योजनाओं पर ध्यान, शिक्षा की समुचित व्यवस्था, प्रशासन एवं न्याय प्रणाली में सुधार आदि को अपनाकर प्रशासन को नया औचित्य प्रदान किया। हालाँकि इन सुधारों की भी अपनी सीमाएँ रहीं। अभी भी संसदीय प्रणाली कमज़ोर रही तथा शासन का मूल ढाँचा सामंती ही बना रहा। ये सुधार कहीं न कहीं प्रचलित ढाँचे को मज़बूत करने के उद्देश्य से परिचालित रहे। रूस में तो सामंतवाद और सशक्त हुआ।

क्या प्रबोधन का आधार अभिजात्य था?

दरअसल ऐसा माना जाता है कि प्रबुद्ध चिंतकों ने जनसामान्य को प्रभावित नहीं किया। इसके समर्थन में कहा जाता है कि प्रबुद्ध चिंतकों ने जनसामान्य को अपने विचारों से दूर रखा, जैसे- वॉल्टेयर के बारे में ऐसा कहा जाता है कि संवाद करते समय वह अपने नौकरों को अवकाश पर भेज देता था, ताकि वे परिचर्चा न सुन सकें। इन चिंतकों को ऐसा भय था कि अगर ये परिचर्चा इन तक पहुँचेगी तो वे कहीं क्रांति की तरफ न मुड़ जाएँ।

यद्यपि प्रबोधन का आधार अभिजात्यवर्गीय था, तथापि यह कहना कि इसका प्रभाव जनसामान्य पर नहीं पड़ा, सत्य प्रतीत नहीं होता है। वस्तुतः तत्कालीन यूरोप की अधिकतर जनसंख्या गरीब एवं निरक्षर थी, अतः वह प्रबुद्ध विचारों को समझने में असमर्थ थी। फिर भी सीमित अर्थों में इनका प्रभाव उन पर दृष्टिगोचर होता है। यही कारण है कि आगे चलकर यूरोप से दास प्रथा का उन्मूलन संभव हो सका।

3 आधुनिक राजनीति के मूल स्रोत
Origins of Modern Politics

अमेरिकी क्रांति एवं संविधान

क्रांति से पूर्व अमेरिका की स्थिति

आज संयुक्त राज्य अमेरिका विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली राष्ट्र है। जिस समय विश्व दो गुटों (पूंजीवाद और साम्यवाद) में बँटा हुआ था, उस समय पूंजीवादी गुट का नेतृत्व अमेरिका तथा साम्यवादी गुट का नेतृत्व सोवियत संघ कर रहा था। परंतु सोवियत संघ के पतन के बाद विश्व में अमेरिका का एकछत्र वर्चस्व स्थापित हो गया। वर्तमान में जो राष्ट्र विश्व में अपनी शक्ति का लोहा मनवा रहा है, कभी वह इंग्लैंड के अधीन एक औपनिवेशिक राज्य था। अमेरिकी क्रांति इसी पराधीनता से मुक्ति का इतिहास है।

16वीं सदी के आरंभ में यूरोपीय देशों द्वारा अमेरिका में अपने उपनिवेश स्थापित किये जा रहे थे। यद्यपि उपनिवेशीकरण की प्रक्रिया स्पेन द्वारा आरंभ की जा चुकी थी, लेकिन आगे चलकर ब्रिटेन, फ्राँस, हॉलैंड आदि देशों ने उत्तरी अमेरिका के उपनिवेशीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। अमेरिका में ब्रिटिश उपनिवेशीकरण की शुरुआत 1588 ई. में ब्रिटेन और स्पेन के मध्य हुए नौसैनिक संघर्ष के पश्चात् हुई। इस संघर्ष में स्पेन की पराजय हुई तथा ब्रिटिश नौसैनिकों की श्रेष्ठता स्थापित हुई। तत्पश्चात् इंग्लैंड ने अमेरिका में औपनिवेशिक बस्तियाँ बसानी शुरू कीं। 18वीं शताब्दी तक अंग्रेज़ों ने फ्राँसीसियों को उत्तरी अमेरिका और कनाडा के पूर्वी तट से खदेड़ दिया तथा अटलांटिक महासागर के तट पर तेरह बस्तियाँ स्थापित कीं। जो इस प्रकार हैं- मैसाचुसेट्स, न्यू हैंपशायर, रोड्स द्वीप, न्यूयॉर्क, न्यूजर्सी, मेरीलैंड, उत्तरी कैरोलिना, दक्षिणी कैरोलिना, जॉर्जिया, वर्जीनिया, कनेक्टिकट, डेलावेयर, पेंसिल्वेनिया।

भौगोलिक दृष्टि से अमेरिकी बस्तियों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है- उत्तरी भाग, मध्य भाग एवं दक्षिणी भाग। उत्तरी भाग पहाड़ी तथा बर्फीला क्षेत्र था, जिसमें मैसाचुसेट्स, न्यू हैंपशायर और रोड्स द्वीप शामिल थे। यह क्षेत्र कृषि के लिये अनुपयुक्त था। यहाँ से लकड़ी एवं मछली प्राप्त होती थी। मध्य भाग अर्थात् न्यूयॉर्क, न्यूजर्सी, मेरीलैंड आदि में चीनी और शराब जैसे उद्योग स्थापित थे। दक्षिणी भाग की जलवायु अपेक्षाकृत गर्म थी। अत: यह क्षेत्र कृषि के लिये उपयुक्त था। यहाँ खेती के लिये बड़े-बड़े फार्म बनाए गए थे तथा तंबाकू, गन्ना, कपास, अनाज तथा बागानी फसलों का उत्पादन किया जाता था। इस क्षेत्र में मुख्यत: उत्तरी कैरोलिना, दक्षिणी कैरोलिना, जॉर्जिया, वर्जीनिया आदि आते थे। प्रत्येक उपनिवेश में एक विधानसभा होती थी जो स्थानीय मामलों के लिये कानून बनाती थी। इसके सदस्य विशेष योग्यता प्राप्त मतदाताओं द्वारा चुने जाते थे। उपनिवेशों को पर्याप्त स्वायत्तता प्राप्त थी।

अमेरिकी उपनिवेशों में 90 प्रतिशत अंग्रेज़ और 10 प्रतिशत डच, जर्मन, फ्राँसीसी, पुर्तगाली आदि थे। यूरोप के विभिन्न देशों, यथा- फ्राँस, ब्रिटेन, जर्मनी, हॉलैंड आदि से लोग यहाँ आकर बस गए थे।

अमेरिका में यूरोपीयों के बसने के कारण

धार्मिक कारक

यूरोप में धर्म सुधार के चलते प्रोटेस्टेंट आंदोलन का प्रसार हो रहा था। इसी के तहत इंग्लैंड में एंग्लिकन चर्च की स्थापना की गई। लेकिन इसका परंपरागत तत्त्वों द्वारा भारी विरोध किया जा रहा था। प्रतिक्रियास्वरूप अनेक धार्मिक संघों की स्थापना की गई। मैसाचुसेट्स के समीप प्लीमथ उपनिवेश की स्थापना करने वाले प्यूरिटन अंग्रेज़ ही थे जो अपनी धार्मिक स्वतंत्रता के लिये जेम्स प्रथम के समय में इंग्लैंड से अमेरिका आकर बसे थे। क्वेकर संप्रदाय के अनुयायियों, विलियम पेन तथा उसके साथियों ने धार्मिक दृष्टि से ही पेंसिल्वेनिया

4

औद्योगीकरण
Industrialization

औद्योगिक क्रांति (Industrial Revolution)

अर्थ

'औद्योगिक क्रांति' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग इंग्लैंड के आर्थिक इतिहासकार अर्नाल्ड टॉयनबी ने किया। वस्तुत: औद्योगिक क्रांति उत्पादन प्रणाली में परिवर्तन थी जिसके तहत हस्त शिल्प के स्थान पर शक्ति संचालित यंत्रों से काम लिया जाने लगा तथा औद्योगिक संगठन में भी परिवर्तन हुआ।

18वीं सदी के उत्तरार्द्ध एवं 19वीं सदी में ब्रिटिश उद्योगों को अनेक महत्त्वपूर्ण एवं व्यापक परिवर्तनों से गुज़रना पड़ा जिसके कारण इन परिवर्तनों को सामूहिक रूप से औद्योगिक क्रांति कहा जाने लगा। वस्तुत: यह कोई आकस्मिक घटना नहीं अपितु विकास की एक सतत प्रक्रिया रही है। औद्योगिक क्रांति के अंतर्गत बहुत सारे परिवर्तन हुए। मानवीय श्रम के स्थान पर उत्पादन कार्य मशीनों से होने लगा। नवीन आधारभूत धातुओं, मुख्यत: लौह एवं इस्पात का प्रयोग किया जाने लगा। नवीन ऊर्जा स्रोतों, जैसे- कोयला, पेट्रोलियम, विद्युत, वाष्प इंजन, ताप इंजन आदि का उपयोग होने लगा। अब कारखानों में उत्पादन किया जाने लगा जिसमें श्रम विभाजन, कार्य कुशलता तथा विशेषज्ञता का समावेश हुआ। कारखाना प्रणाली के उद्भव और विकास के फलस्वरूप पूंजीवाद का उदय हुआ और पूंजी संचय की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला। वाष्पचालित रेल इंजन और यंत्रचालित जहाज़ों के कारण यातायात में आमूल-चूल परिवर्तन हो गया। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि हुई सामाजिक संरचना में परिवर्तन हुआ। सामंतों की जगह उद्योगपति एवं बुर्जुआ वर्ग अस्तित्व में आए। वस्तुत: ये परिवर्तन 18वीं सदी के उत्तरार्द्ध में अत्यंत तीव्र गति से हुए और इनके परिणाम भी क्रांतिकारी, तीव्र, एवं युगांतकारी थे। अत: इन परिवर्तनों को औद्योगिक क्रांति के नाम से जाना गया।

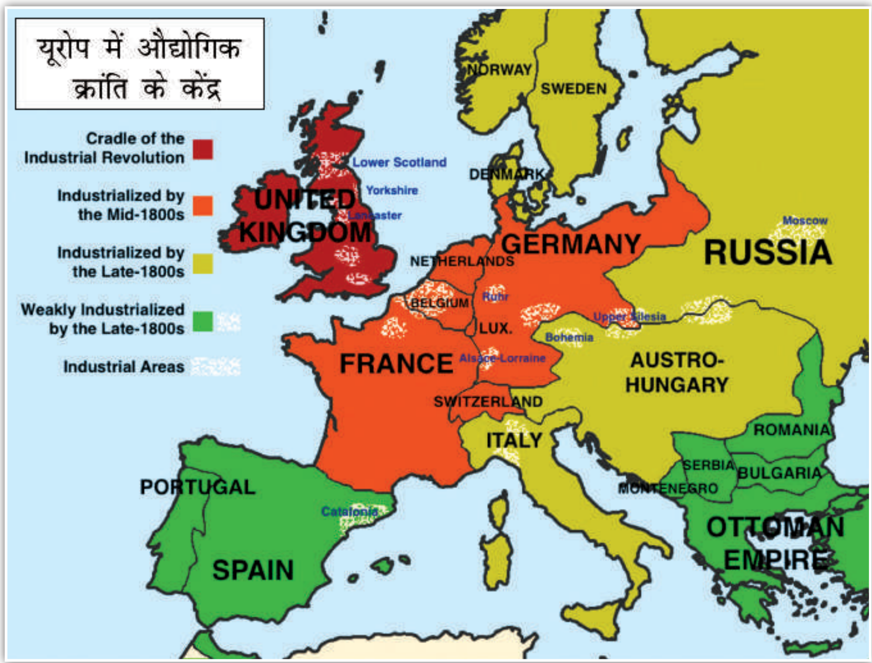

औद्योगिक क्रांति से पूर्व की स्थिति

1450 से 1750 ई. के मध्य वाणिज्यिक क्रांति से यूरोप की अर्थव्यवस्था में क्रांतिकारी बदलाव आए। इसके तहत राज्य (State) के वाणिज्य-व्यापार में नियंत्रण और हस्तक्षेप को प्रोत्साहित एवं विस्तारित किया गया। इसके माध्यम से राष्ट्रीय संपदा और शक्ति को उत्तरोत्तर बढ़ाने का प्रयास किया गया।

मध्यकाल में वाणिज्यवाद के उदय के लिये प्रभावी कारकों में पहला, पुनर्जागरण ने भौतिक विषयों में खुशियों को खोजा, अत: वस्तुओं एवं सेवाओं की मांग बढ़ी। दूसरा, सामंतवाद के पतन के कारण गिल्ड और मेनर से मुक्त श्रमिकों ने कुटीर उद्योगों की शुरुआत की एवं अपना व्यापार बढ़ाने का प्रयास किया। तीसरा, धर्मसुधार आंदोलन के कारण चर्च और धार्मिक प्रभाव से आर्थिक गतिविधियाँ मुक्त हुई। चौथा, भौगोलिक खोजों से नए बाज़ारों तक उत्पादों की पहुँच संभव हुई वाणिज्यवाद में विदेशी व्यापार बढ़ाने पर बल दिया गया। चाँदी और सोने के संकेद्रण पर ज़ोर रहा। व्यापार और वाणिज्यिक गतिविधियों पर राज्य का नियंत्रण एवं हस्तक्षेप रहा।

औद्योगिक क्रांति के विस्तार और पूंजीपति वर्ग के उभार के साथ वाणिज्यवाद का क्रमिक विरोध शुरू हुआ। 1776 ई. में एडम स्मिथ ने Wealth of Nation के माध्यम से वाणिज्यवाद की आलोचना की। एडम स्मिथ का कहना था कि कोई भी देश स्थायी रूप से व्यापार संतुलन नहीं

5

राष्ट्र–राज्य प्रणाली
Nation-State System

इटली में राज्य निर्माण

19वीं सदी के यूरोप में जिस राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ था उसकी अभिव्यक्ति इटली और जर्मनी के एकीकरण में हुई। प्राचीनकाल से ही इटली ने यूरोपीय राजनीति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। रोमन सभ्यता के पतन के बाद भी इटली का महत्त्व यूरोपीय जगत में कम नहीं हुआ था। रोमन कैथोलिक धर्म के प्रमुख स्थल के रूप में रोम पोप के धार्मिक कार्यों का केंद्र बिंदु बन चुका था। इस तरह इटली राजनीतिक दृष्टि से अपना महत्त्व खोता जा रहा था, किंतु सामाजिक व धार्मिक दृष्टि से उसका महत्त्व बना हुआ था।

वस्तुतः 19वीं सदी के आरंभ तक इटली कोई देश नहीं था। यह राजनीतिक दृष्टि से अनेक छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित था। यूरोप के विभिन्न राजवंश इटली के इन राज्यों पर अधिकार करने के लिये प्रयत्नशील रहते थे। यही कारण है कि मैटरनिक ने इटली को 'एक भौगोलिक अभिव्यक्ति मात्र' की संज्ञा दी थी। लेकिन उसका यह कथन सत्य प्रतीत नहीं लगता। यदि हम इटली की भौगोलिक स्थिति पर दृष्टिपात करें तो इसकी चौहद्दी को परिभाषित करने वाले तत्त्व वहाँ मौजूद थे। उत्तर में आल्प्स पर्वत तथा तीन तरफ समुद्र से घिरा यह प्रायद्वीप यूरोप के मध्य-दक्षिण में स्थित था। इसी तरह यहाँ इसे जोड़ने वाले तत्त्व भी विद्यमान थे, जैसे- रोमन साम्राज्य की याद यहाँ के लोगों में हमेशा बनी रहती थी, तत्कालीन यूरोप के साहित्य एवं धर्म की भाषा लैटिन थी जो कि इटली की ही भाषा थी। रोमन कैथोलिक धर्म के प्रमुख स्थल के रूप में रोम इटली को धार्मिक एकता प्रदान करता था, साथ ही यहाँ एक प्रकार की सांस्कृतिक एकता भी विद्यमान थी आदि। इस तरह उपर्युक्त कारकों ने ही इटली के एकीकरण को प्रोत्साहन दिया। फिर कुछ अन्य कारकों, जैसे- फ्राँस की क्रांति, औद्योगिक क्रांति आदि ने एकीकरण की प्रक्रिया में सहायक कारक की भूमिका निभाई।

एकीकरण में बाधाएँ

इटली के एकीकरण में बाह्य एवं आंतरिक अनेक बाधाएँ विद्यमान थीं। एक तरफ जहाँ इसकी भौगोलिक स्थिति प्रमुख बाधा थी तो दूसरी तरफ यह तीन राजनीतिक खंडों में विभक्त था- उत्तरी इटली, मध्य इटली तथा दक्षिणी इटली। मध्य इटली में पोप का राज्य होने के कारण इटली के उत्तरी एवं दक्षिणी हिस्से एक-दूसरे से अलग-थलग थे। इतना ही नहीं, पोप भी एकीकरण का विरोधी था क्योंकि उसकी सत्ता सिमटती दिख रही थी। इसलिये पोप रोम पर अपनी सत्ता बनाए रखना चाहता था। कैथोलिक यूरोप के देश भी पोप के अस्तित्व को नष्ट नहीं होने देना चाहते थे। अतः एकीकरण में विदेशी हस्तक्षेप प्रमुख बाधक तत्त्व था।

- प्रतिक्रियावादी विदेशी प्रभुत्व की मौजूदगी भी इटली के एकीकरण में बाधक था। वस्तुतः इटली में ऑस्ट्रिया का प्रभुत्व था तथा उसका इटली के एक हिस्से, लोंबार्डी एवं वेनेशिया पर सीधा नियंत्रण था जबकि परमा, मोडेना एवं टस्कनी पर ऑस्ट्रिया से संबंधित राजपरिवार का अधिकार था। इतना ही नहीं, यूरोपीय व्यवस्था के अनुसार ऑस्ट्रिया का चांसलर मैटरनिक यूरोप का पुलिसमैन था। इस हैसियत से वह किसी भी यूरोपीय देश में उदारवादी एवं राष्ट्रवादी आंदोलन को कुचलना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझता था।
- आंतरिक बाधाओं में, विभिन्न राज्यों के शासक भी एकीकरण के विरोधी थे क्योंकि एकीकरण के पश्चात् इनकी स्वतंत्र सत्ता समाप्त हो जाती।
- इटली के कुलीन एवं सामंत भी एकीकरण के विरोधी थे। दरअसल नेपोलियन के पतन के पश्चात् यह वर्ग पुनः सामंतवादी एवं जागीरदारी व्यवस्था स्थापित करना चाहता था। चूँकि 1815 तक इटली में

6

साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद
Imperialism and Colonialism

विश्व इतिहास में साम्राज्यवाद शब्द का प्रयोग व्यापक स्तर पर हुआ है, इस कारण इसकी निश्चित परिभाषा दे पाना एक चुनौती के समान है। चार्ल्स हाजस के अनुसार, "साम्राज्यवाद दूसरे राष्ट्रों के लोगों के आंतरिक जीवन में विदेशी राजनीतिक, आर्थिक, या सांस्कृतिक स्तर पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सक्रिय हस्तक्षेप है अर्थात् एक देश के लोगों द्वारा दूसरे देश के लोगों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष नियंत्रण करना है।" वस्तुतः साम्राज्यवाद के तहत एक शक्तिशाली देश अन्य देशों पर राजनीतिक शक्ति का विस्तार करता है, उनके आर्थिक साधनों का दोहन करता है एवं सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर पर अपने हितों के अनुकूल परिवर्तन करता है।

यूरोपीय नवीन साम्राज्यवाद का स्वरूप (1870-1945)

1870 ई. के बाद यूरोप में नवीन साम्राज्यवाद का विकास हुआ। पुराने साम्राज्यवाद का मुख्य आधार 'वाणिज्यवाद' था। जिसमें व्यापार को अधिकतम करके अधिक से अधिक बुलियन (कीमती धातु- सोना, चांदी) प्राप्त करना था। 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में 'मुक्त व्यापार' या अहस्तक्षेप (Laissez faire) की नीति के निरंतर लोकप्रिय होने से औपनिवेशिक साम्राज्य (पुराने साम्राज्यवाद) की जड़ें हिल गईं। अतः 19वीं शताब्दी के उत्तार्द्ध में नव-साम्राज्यवाद का विकास हुआ जो आर्थिक कारकों से प्रभावित एवं संचालित था।

यूरोप में औद्योगीकरण के कारण उद्योगों में अधिक कच्चे माल की आवश्यकता हुई। साथ ही उद्योगों से निर्मित उत्पादों की खपत के लिये बाज़ार की आवश्यकता हुई। अतः औद्योगीकरण के विस्तार में ही नवीन साम्राज्यवाद के बीज निहित थे। नव-साम्राज्यवाद के कारण यूरोप की शक्तियों के बीच में एशिया, अफ्रीका के अविकसित क्षेत्रों पर अधिकार करने की प्रतिस्पर्धा शुरू हो गई। एशियाई देश जापान भी 'मेइजी शासन की पुनःस्थापना' के बाद नव-साम्राज्यवाद की दौड़ का एक सक्रिय भागीदार बन गया। यूरोपीय देशों ने एशिया एवं अफ्रीका पर अपने आर्थिक नियंत्रण को अलग-अलग नाम दिये। फ्रांँस ने इसे 'सभ्यता का विस्तार' कहा, इटली ने इसे 'पुनीत कर्त्तव्य' घोषित किया तो इंग्लैंड ने इसे 'श्वेत जाति का दायित्व' कहा।

नवीन साम्राज्यवाद के प्रेरक तत्त्व

आर्थिक कारक

19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में यूरोप में त्वरित औद्योगिक विकास हुआ। उत्पादन इतना अधिक होने लगा कि उसकी खपत के लिये बाज़ार की आवश्यकता महसूस हुई। साथ ही सतत रूप से उद्योगों को संचालित करने के लिये कच्चे माल की आवश्यकता बढ़ती चली गई। अतः यूरोपीय देशों में एशिया और अफ्रीका महाद्वीपों के अविकसित देशों पर नियंत्रण करने की प्रतिस्पर्धा प्रारंभ हो गई। साथ ही नए उपनिवेशों में औद्योगिक देशों के द्वारा अतिरिक्त पूंजी भी लगाई जा रही थी। इस पूंजी पर उच्च ब्याज मिलने की पूर्ण संभावना थी। इस कारण व्यापारी एवं उद्यमी वर्ग के द्वारा भी उपनिवेश स्थापित करने की मांग की जाने लगी।

यूरोप में जनसंख्या वृद्धि

19वीं शताब्दी में औद्योगीकरण के विस्तार के साथ ही यूरोप के देशों में जनसंख्या वृद्धि हुई। 1880 ई. से 1914 ई. के मध्य यूरोप की आबादी बढ़कर लगभग 45 करोड़ हो गई। ब्रिटेन एवं स्कैंडीनेवियाई देशों में आबादी वृद्धि दर औसत से उच्च रही। अतिरिक्त जनसंख्या को रोज़गार देने एवं बसाने के क्रम में उपनिवेशों पर अधिकार को बढ़ावा मिला। इन उपनिवेशों के विस्तार में सैनिकों की एवं प्रशासन के लिये प्रशासकों की मांग को यूरोप की बढ़ती जनसंख्या ने पूर्ण किया।

साहसी खोजकर्त्ताओं का योगदान

साहसिक व्यक्तियों एवं खोजकर्त्ताओं के कार्यों से भी उपनिवेशवाद को बढ़ावा मिला। कुछ प्रशासकों एवं सैनिक प्रमुखों ने भी उपनिवेश स्थापना को राष्ट्रीय दायित्व मानकर लगन एवं निष्ठा से इसे पूरा करने का प्रयास किया। विशेषकर अफ्रीकी महाद्वीप पर यूरोप के साम्राज्यवाद की स्थापना में साहसी खोजकर्त्ताओं की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

राष्ट्रवाद का प्रसार

आर्थिक उद्देश्यों को गतिशील और त्वरित बनाने में राष्ट्रीयता की भावना निर्णायक रही। 19वीं शताब्दी में यूरोप के देशों में अनेक राष्ट्रवादी राजनीतिज्ञ, लेखक, विचारक एवं अर्थशास्त्री हुए, जिन्होंने राष्ट्रीय गौरव, राष्ट्रीय सुरक्षा और आत्मनिर्भरता की दृष्टि से उपनिवेशवाद को निरंतर प्रोत्साहित किया। ब्रिटेन, फ्रांँस, पुर्तगाल, स्पेन आदि एशिया एवं लैटिन अमेरिका में उपनिवेशों का विस्तार कर चुके थे। इटली और जर्मनी ने एकीकरण पूर्ण होने के बाद उपनिवेश स्थापना को राष्ट्रीय गौरव का प्रश्न बना लिया था। इस कारण नए उपनिवेश स्थापना को गति मिली।

ईसाई धर्म प्रचारकों की भूमिका

ईसाई धर्म का प्रसार करने एवं पश्चिमी संस्कृति को विस्तारित करने में ईसाई मिशनरियों की भूमिका अहम रही। इंग्लैंड के डॉक्टर लिविंगस्टन ने 20 वर्षों तक अफ्रीका के आंतरिक प्रदेशों और कांगो नदी

7

क्रांति एवं प्रतिक्रांति
Revolution and Counter Revolution

19वीं सदी की यूरोपीय क्रांतियाँ

1830 की क्रांति

1830 की फ्राँसीसी क्रांति का विश्व इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। वस्तुतः नेपोलियन के पतन के बाद यूरोप में पुनर्गठन का कार्य प्रारंभ हुआ। इसी के तहत वियना कॉन्ग्रेस में फ्राँस में बूर्बो राजवंश को पुनर्जीवित कर लुई 18वें को शासक बनाया गया। ध्यातव्य हो कि 1828 ई. में लुई 18वें की मृत्यु हो गई। लुई की मृत्यु के पश्चात् उसका भाई चार्ल्स दशम गद्दी पर बैठा। चार्ल्स दशम एक स्वेच्छाचारी शासक था तथा क्रांति का घोर विरोधी था। वह राजा के दैवीय अधिकारों के सिद्धांत को मानता था तथा फ्राँस में 17-18वीं शताब्दी के शासकों के समान निरंकुश शासन व्यवस्था की स्थापना करना चाहता था। वह कहता था, "इंग्लैंड के राजा की तरह शासन करने की अपेक्षा मैं लकड़ी चीरना अधिक पसंद करूँगा।"

चार्ल्स दशम की घोर प्रतिक्रियावादी नीतियों ने फ्राँस को क्रांति के मुहाने पर ला खड़ा कर दिया। यही कारण है कि इतिहास में इसे राजा द्वारा की गई क्रांति की संज्ञा भी दी जाती है।

1830 की क्रांति के कारण

- चार्ल्स दशम प्रतिक्रियावादी शासक था। सत्तासीन होते ही उसने सत्ता विरोधियों का दमन करना शुरू कर दिया। इतना ही नहीं प्रेस एवं भाषण पर पूर्ण प्रतिबंध भी आरोपित कर दिया। फिर उसका प्रमुख उद्देश्य चर्च एवं राज्य को एक कर देना था। अपने इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिये उसने कई कदम उठाए, जैसे- चर्च की आलोचना करने वालों के लिये 7 वर्षों की सज़ा का विधान, कैथोलिक धर्म विरोधी अध्यापकों को पदच्युत करना आदि।
- चार्ल्स दशम ने कुलीनों के हितों की रक्षा करते हुए क्रांति के दौरान हुई उनकी आर्थिक क्षति हेतु एक बड़ी रकम दी। इसके लिये उसने राष्ट्रीय ऋण की ब्याज दर 5% से घटाकर 4% कर दिया। चार्ल्स के इस कदम से मध्य वर्ग खासा नाराज़ हुआ क्योंकि इसी वर्ग के द्वारा सरकार को कर्ज़ दिया गया था।
- 1830 ई. में चार्ल्स ने घोर प्रतिक्रियावादी नेता पोलिग्नैक को अपना प्रधानमंत्री नियुक्त किया। इस नियुक्ति का जनता द्वारा भारी विरोध किया गया। विरोध को दबाने के लिये पोलिग्नैक द्वारा चार अध्यादेश जारी किये गए-
  - राष्ट्रीय प्रतिनिधि सभा को भंग कर दिया गया।
  - मतदाताओं की संख्या घटा दी गई अर्थात् मताधिकार सीमित कर दिया गया। अब केवल कुलीन वर्ग के लोग ही मतदान कर सकते थे।
  - एक नए कानून के तहत सितंबर 1830 में निर्वाचन कराने की बात कही गई।
  - प्रेस की स्वतंत्रता छीन ली गई, अब बिना राजा की अनुमति के कोई समाचार प्रकाशित नहीं किया जा सकता था।

सर्वप्रथम फ्राँस के पत्रकारों द्वारा इन अध्यादेशों के विरुद्ध एक घोषणा पत्र प्रस्तुत किया गया जिसमें उन्होंने फ्राँसीसी जनता से इसका विरोध करने की अपील की। फलतः विद्यार्थी, उदारवादी, गणतंत्रवादी,

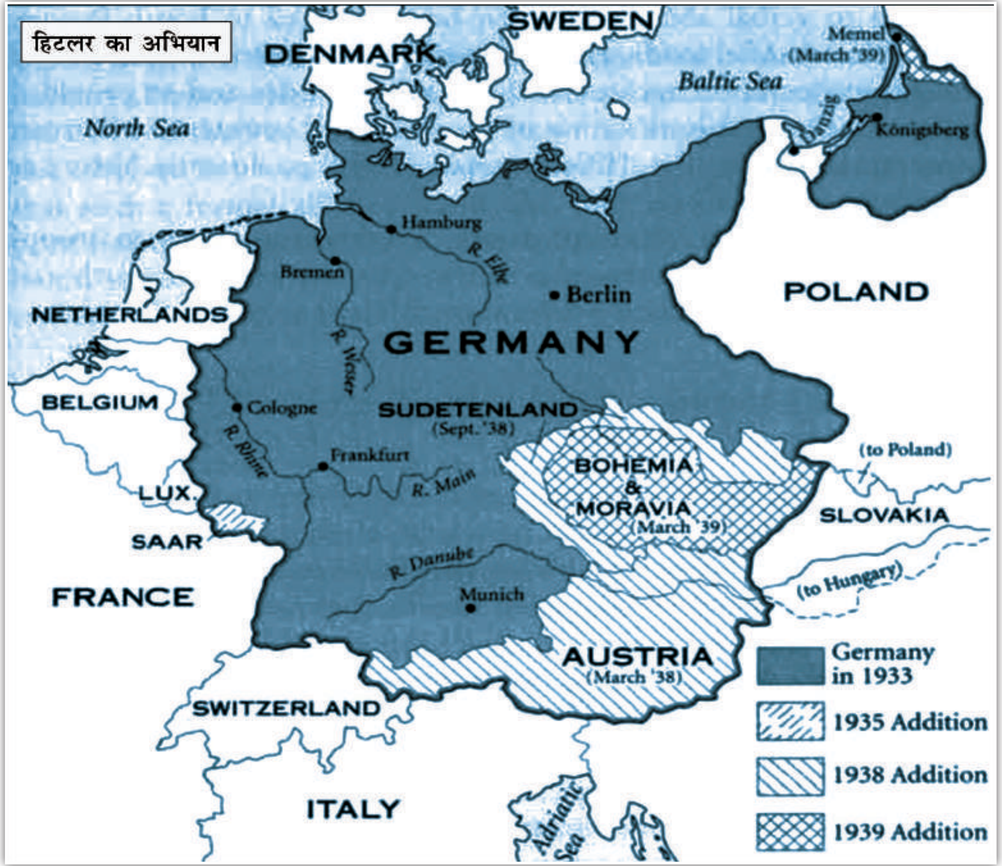

ब्रिटेन से नौसैनिक समझौता

हिटलर द्वारा वर्साय की संधि की अवहेलना का लंदन (ब्रिटेन), पेरिस (फ्राँस) एवं रोम (इटली) ने विरोध तो किया लेकिन इनके हित आपस में टकराते थे। ब्रिटेन नहीं चाहता था कि यूरोप में फ्राँस शक्तिशाली बने। हिटलर ब्रिटेन की इस मनोवृत्ति को अच्छी तरह समझता था। ब्रिटेन को अब तक हिटलर द्वारा किये गए कार्यों से कोई खतरा नहीं था। उसने जर्मनी के साथ 1935 में एक नौसैनिक समझौता किया ताकि उसकी नौसैनिक सर्वोच्चता बनी रहे। समझौते के अनुसार तय किया गया कि जर्मनी को अधिकार है कि वह ब्रिटेन के जहाज़ी बेड़े की तुलना में एक-तिहाई जहाज़ी बेड़ा तैयार कर सकता है। यह समझौता हिटलर की भारी विजय थी क्योंकि इस प्रकार ब्रिटेन ने हिटलर द्वारा वर्साय की सैनिक धाराओं के उल्लंघन की बात स्वीकार की। इस संधि को भंग करने की शिकायत करने का कोई नैतिक अधिकार ब्रिटेन के पास नहीं रहा। संधि से फ्राँस और इटली ब्रिटेन से नाराज़ हुए, फलत: 'स्ट्रेसा' में गठित कूटनीतिक मोर्चा टूट गया।

राइनलैंड पर अधिकार एवं उसका सैन्यीकरण

हिटलर द्वारा वर्साय की शर्तों का एक बार फिर उल्लंघन किया गया, वह था राइनलैंड का सैन्यीकरण। हिटलर ने देखा कि ब्रिटेन और फ्राँस द्वारा अबीसीनिया पर मुसोलिनी के हमले का प्रबल विरोध नहीं किया गया। अत: उसने राइनलैंड के बारे में अपनी योजना को क्रियान्वित करना चाहा। 1936 में उसने घोषणा की क्योंकि 1935 के फ्रेंच-सोवियत समझौते से लोकार्नो संधि का उल्लंघन हुआ है, अत: वह राइनलैंड पर कब्ज़ा करना चाहता है। शीघ्र ही उसने 35 हज़ार जर्मन सैनिकों को भेजकर राइनलैंड पर अधिकार कर लिया।

रोम-बर्लिन धुरी

हिटलर ने अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में अपने स्वाभाविक मित्रों की तलाश की। इस क्रम में उसने यह महसूस किया कि समान विचारधारा एवं हितों वाले कुछ राष्ट्रों से मैत्री करना आवश्यक है। हिटलर जर्मनी, इटली एवं जापान को मैत्री बंधन में बंधे देखना चाहता था क्योंकि ये तीनों एक समान विचारधारा के समर्थक थे। जनतंत्र से इन्हें घृणा थी और साम्यवाद के ये कट्टर शत्रु थे, अत: मैत्री होना स्वाभाविक था। अबीसीनिया युद्ध के समय जर्मनी ने इटली को समर्थन दिया था। स्पेन के गृहयुद्ध के मौके पर फ्रेंको को हिटलर व मुसोलिनी दोनों ने मदद की थी। पारस्परिक सहयोग के कारण दोनों देश एक दूसरे के निकट आए और 25 अक्तूबर, 1936 को बर्लिन-रोम के बीच संधि हुई जो रोम-बर्लिन धुरी के नाम से प्रसिद्ध है। इस समझौते के तहत- 1. दोनों राज्य पारस्परिक हितों के मामले में सहयोग करेंगे 2. प्रादेशिक अखंडता की रक्षा की जाएगी, 3.

8

प्रथम एवं द्वितीय विश्वयुद्ध
First and Second World War

प्रथम विश्वयुद्ध

प्रथम विश्वयुद्ध विश्व इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण घटना है। यह पहला अवसर था जब एक यूरोपीय युद्ध ने विश्वयुद्ध का रूप धारण कर लिया तथा एक ही प्रवृत्ति एवं अंत:संबद्धता के आधार पर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से विश्व के लगभग सभी देश इसमें सम्मिलित हुए। यह अत्यंत भीषण युद्ध था जो उग्रराष्ट्रवाद, सैन्यवाद एवं साम्राज्यवाद की उपज था जिसमें पारस्परिक भय एवं संदेह ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। वस्तुत: यूरोप में राष्ट्रीय राज्य के निर्माण के क्रम में परस्पर संघर्ष भी देखे जा सकते हैं लेकिन पहले इन संघर्षों का दायरा सीमित होता था। फिर राष्ट्रों के मध्य यही छोटे-छोटे झगड़े 20वीं सदी में विश्वयुद्ध का रूप धारण कर लेते हैं।

पृष्ठभूमि

युद्ध के पूर्व यूरोप की छह राजनीतिक शक्तियाँ क्रमश: इंग्लैंड, फ्राँस, रूस, ऑस्ट्रिया, जर्मनी एवं इटली थीं। औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप यूरोप की औद्योगिक प्रगति ने उपनिवेशवाद को जन्म दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि यूरोप के विकसित देशों ने एशिया और अफ्रीका के अनेक देशों में औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित कर लिये थे। अभी भी यूरोपीय देशों के मध्य औपनिवेशिक प्रतियोगिता चल रही थी। जो इन देशों की आंतरिक और अंतर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित कर रही थी, पूर्वी यूरोप एवं बाल्कन प्रदेशों में यूरोपीय राष्ट्र अपनी-अपनी सर्वोच्चता स्थापित करना चाहते थे। अत: यूरोप के अंदर क्षेत्रीय विस्तार की भावना विद्यमान थी।

- **जर्मनी:** जर्मनी, इंग्लैंड का एक सशक्त विरोधी राज्य के रूप में उभर रहा था। बिस्मार्क के कार्यकाल (1870-1890 ई.) तक जर्मनी की विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य फ्राँस को केवल मित्रविहीन रखना था। किंतु 1890 के बाद जर्मन शासक विलियम कैसर द्वितीय की विदेश नीति का रुख आक्रामक था। वह संपूर्ण यूरोप ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में अपनी सत्ता स्थापित करना चाहता था। उसने जर्मनी की सैन्य शक्ति, विशेषकर नौसैन्य शक्ति में वृद्धि करने का प्रयास किया। 1900 ई. में 'जर्मन नौसेना अधिनियम' पारित हुआ जिसमें कहा गया, "जर्मनी का नौसैनिक बेड़ा इतना शक्तिशाली होगा कि यदि सबसे अधिक ताकतवर नौसैनिक शक्ति उससे टकराएगी तो उसकी ताकत के लिये खतरा पैदा हो जाएगा।" अत: यह अप्रत्यक्ष रूप से इंग्लैंड को खुली चुनौती थी। औपनिवेशिक विस्तार के मुद्दे पर भी इंग्लैंड और जर्मनी के हित एक-दूसरे से टकराते थे। बिस्मार्क के काल में जहाँ फ्राँस को जर्मनी का शत्रु माना जाता था। वहीं अब इंग्लैंड और जर्मनी की शत्रुता बढ़ने लगी थी। बिस्मार्क के काल में त्रिगुट संधि (Triple Alliance) 1882 में हुई थी। जिसमें जर्मनी, ऑस्ट्रिया और इटली सम्मिलित थे। इसके तहत बाह्य आक्रमण की स्थिति में तीनों राष्ट्रों ने एक दूसरे की सहायता का वचन दिया।
- **इंग्लैंड:** जर्मनी की विदेश नीति ने इंग्लैंड को अपनी पृथकतावादी नीति छोड़ने के लिये बाध्य कर दिया। अत: उसने अपनी सुरक्षा के लिये सैनिक संधियाँ करना आवश्यक समझा। इसी क्रम में इंग्लैंड ने जापान के साथ और 1904 में फ्राँस के साथ संधि की। 1907 में इंग्लैंड ने फ्राँस और रूस के साथ संधि कर जर्मनी के त्रिगुट के विरुद्ध त्रिवर्ग मैत्रीसंघ (Triple Entente) का निर्माण किया। इस प्रकार यूरोप में दो विरोधी गुटों का निर्माण हो गया जो प्रथम विश्वयुद्ध का कारण बना।
- **फ्राँस:** फ्राँस को 1870 में प्रशा (जर्मनी) के हाथों हार का सामना करना पड़ा था। उसके अल्सास-लॉरेन स्थित खनिज भंडार के क्षेत्र जर्मनी ने ले लिये थे। फ्राँस को ये क्षेत्र गँवाना हमेशा खलता रहता था और वह पुन: इन्हें प्राप्त करने के लिये लालायित था। जर्मनी को यह भय बराबर बना हुआ था कि अवसर पाते ही फ्राँस उस पर आक्रमण कर सकता है।
- **रूस:** रूस औपनिवेशिक प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं था क्योंकि इसका औद्योगिक विकास उस स्तर पर नहीं पहुँचा था, किंतु वह पूर्वी यूरोप की एक क्षेत्रीय शक्ति बनने के लिये प्रयासरत था। आकार की दृष्टि से रूस यूरोप का सबसे बड़ा देश था। रूस 1907 में फ्राँस एवं इंग्लैंड का सहयोगी बन गया था। वह अपने क्षेत्रीय विस्तार योजनाओं के अंतर्गत बाल्कन राज्यों से जर्मनी एवं ऑस्ट्रिया-हंगरी के प्रभाव को समाप्त कर उस पर अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहता था।
- **बाल्कन राज्य:** बाल्कन राज्यों में एक ओर राष्ट्रीय आंदोलन ज़ोर पकड़ रहा था तो वहीं दूसरी ओर अनेक शक्तियाँ उन पर अपना आधिपत्य जमाने के लिये लालायित थीं। बाल्कन राज्यों में स्थित सर्बिया समस्त स्लाव जाति को एक राज्य के रूप मे संगठित करना चाहता था। यूनान अपने प्राचीन गौरव को प्राप्त करने के लिये यूनानी साम्राज्य की स्थापना करना चाहता था। बाल्कन प्रदेशो में ईसाई और मुसलमानों के मध्य संघर्ष की स्थिति थी। यहाँ के राजा ईसाई थे और वे तुर्की के प्रभावों को समाप्त कर देना चाहते थे।

जर्मन सम्राट विलियम कैसर का व्यक्तित्व

विलियम कैसर अत्यधिक हठी, महत्त्वाकांक्षी एवं क्रोधी व्यक्ति था। वह कहता था कि हमारा भविष्य समुद्र पर निर्भर है। उसके जर्मनी को समुद्री शक्ति बनाने के प्रयास ने इंग्लैंड से स्थायी शत्रुता प्राप्त कर ली थी। उसकी नीति थी-संपूर्ण विश्व पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना। यदि इसमें उसे सफलता न मिले तो वह विश्व के सर्वनाश के लिये तत्पर था। व्यापारिक देश होने के कारण इंग्लैंड युद्ध के पक्ष में नहीं था जिसे विलियम कैसर उसकी कायरता समझता था। वह आक्रमक रुख अपनाकर उसे भयभीत कर अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहता था और उसकी यह गलत समझ थी कि इंग्लैंड किसी भी कीमत पर युद्ध टालना चाहेगा। इस प्रकार विलियम कैसर के उग्र, साम्राज्यवादी, निरंकुश तथा स्वेच्छाचारी व्यक्तित्व ने यूरोप को महायुद्ध के कगार पर पहुँचा दिया।

के शासक विलियम कैसर द्वितीय की नीतियों की आलोचना छपती थी तो जर्मनी के समाचार पत्र जवाब में इंग्लैंड की आलोचना छापते थे। फ्राँस और जर्मनी के समाचार पत्र एक-दूसरे के विरुद्ध आग उगलते थे। इनमें छपने वाली सामग्रियों ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कटुतापूर्ण वातावरण उत्पन्न कर दिया था। राष्ट्रवाद के झूठे नारे के प्रभाव में सैनिक ही नहीं बल्कि नागरिक भी एक-दूसरे राष्ट्र के विरुद्ध युद्ध के लिये तत्पर दिखने लगे थे। कुल मिलाकर इनकी भूमिका युद्ध की ओर ले जाने की थी।

बाल्कन क्षेत्र की जटिलता

बाल्कन क्षेत्र की जटिल समस्या ने त्रिवर्गीय संधि और त्रिवर्गीय मैत्रीसंघ के सदस्यों को आमने-सामने ला खड़ा किया। वास्तव में एक तरफ यदि रूस धर्म और जाति के नाम पर स्वयं को स्लाव जाति का संरक्षक समझता था तो दूसरी तरफ ऑस्ट्रिया किसी भी तरह से सर्ब आंदोलन को दबाकर उस क्षेत्र में अपना प्रभाव बढ़ाना चाहता था। ये बातें उतनी उग्र नहीं होतीं यदि सर्बिया को रूस की सहायता का आश्वासन नहीं मिलता, और रूस की पीठ पर फ्राँस और इंग्लैंड के समर्थन की बात नहीं होती। इसी तरह ऑस्ट्रिया भी बाल्कन क्षेत्र में अकेले युद्ध करने की हिम्मत नहीं करता यदि उसे युद्ध के समय जर्मनी और इटली का समर्थन मिलने की आशा नहीं रहती। इसलिये यह कहा जाता है, "प्रथम विश्वयुद्ध दो घोड़ों (सर्बिया और ऑस्ट्रिया) का युद्ध था, घुड़सवार बाद में इस युद्ध में शामिल हुए।"

तात्कालिक कारण

1908–09 के दौरान ऑस्ट्रिया-हंगरी ने बोस्निया-हर्जेगोविना को अपने साम्राज्य में मिला लिया। इन क्षेत्रों की अधिकांश जनसंख्या स्लाव नस्ल की थी एवं सर्बिया स्लाव आंदोलन का अग्रणी देश होने के कारण इन पर अपना प्रभुत्व कायम करना चाहता था। इन राष्ट्रवादी स्लाव उग्रवादियों ने स्लाव मुक्ति की राह में बाधक ऑस्ट्रिया को आतंकित करने के उद्देश्य से 28 जून, 1914 को सराजेवो में वहाँ के राजकुमार आर्कड्यूक फर्डिनेंड तथा उसकी पत्नी की हत्या कर दी। उल्लेखनीय है कि इन हत्याओं की योजना यूनियन ऑफ डेथ या ब्लैक हैंड नामक एक गुप्त संस्था ने बनाई थी। यह उग्रपंथी सर्बियाई राष्ट्रवादियों की एक संस्था थी जिसका उद्देश्य सभी सर्बियाइयों को एक राज्य में संगठित करना था। ऑस्ट्रिया ने इस घटना को अपने राष्ट्रीय गौरव पर आघात माना तथा बदला लेने के लिये बैचेन हो गया। 23 जुलाई को ऑस्ट्रिया ने सर्बिया को चेतावनी देते हुए 11 मांगें रखीं, साथ ही उन्हें मानने हेतु 24 घंटे की समय-सीमा भी निश्चित कर दी। सर्बिया द्वारा कुछ मांगों को मान लेने के बावजूद ऑस्ट्रिया संतुष्ट नहीं हुआ। उसने अपनी सेना को लामबंद होने का आदेश दिया तथा सर्बिया को सदा के लिये समाप्त करने को कृतसंकल्प हो गया। 28 जुलाई को ऑस्ट्रिया ने सर्बिया के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। सर्बिया की मदद हेतु रूस ने सैन्य शक्ति के साथ

9

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद का विश्व
The World After World War-II

शीत युद्ध

दो शक्तियों का आविर्भाव

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व में दो महाशक्तियाँ रह गईं और इन दो महाशक्तियों के आपसी संबंधों को अभिव्यक्त करने वाला सबसे अधिक उपयुक्त शब्द है- शीत युद्ध। यद्यपि विश्वयुद्ध से पूर्व अमेरिका व 'सोवियत संघ' में बुनियादी मतभेद थे फिर भी विश्वयुद्ध के दौरान उन्होंने धुरी राष्ट्रों के खिलाफ मिलकर युद्ध लड़ा और अंततः विजयी हुए। विश्वयुद्ध के बाद सोवियत संघ-अमेरिका संबंधों में कटुता, वैमनस्य, अविश्वास में वृद्धि होती गई। दोनों महाशक्तियों में राजनीतिक प्रचार का संग्राम छिड़ गया और दोनों एक दूसरे का विरोध, आलोचना और सर्वत्र अपना प्रसार करने में लग गए। महाशक्तियों के बीच बने तनावपूर्ण संबंधों से अंतर्राष्ट्रीय राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ा। समूचे विश्व में एक प्रकार के भय, अविश्वास और तनाव का वातावरण बन गया जिससे पुनः एक बार संघर्षपूर्ण स्थिति उत्पन्न हो गई। एक नए युग का आविर्भाव हुआ जिसे 'सशस्त्र शांति का युग' कहा जाता है। इसी बिंदु पर यह सवाल उठता है कि आखिर इन दोनों महाशक्तियों के बीच अविश्वास, तनाव, कटुता की स्थिति क्यों पैदा हो गई। इस प्रश्न का उत्तर ही हमें शीत युद्ध के कारणों को समझने में सहायता देगा। शीत युद्ध के कारणों, परिणाम एवं प्रकृति की मीमांसा करने से पहले 'शीत युद्ध' शब्द का अर्थ एवं उसकी विशेषताओं को समझना वांछनीय होगा।

शीत युद्ध का अर्थ

शीत युद्ध शब्द वाल्टर लिपमैन नामक विद्वान द्वारा गढ़ा गया। शीत युद्ध शब्द से सोवियत संघ-अमेरिकी शत्रुतापूर्ण एवं तनावपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की अभिव्यक्ति होती है। शीत युद्ध एक प्रकार का वाक् युद्ध था जिसमें वैचारिक घृणा, राजनीतिक अविश्वास, कूटनीतिक जोड़-तोड़, सैनिक प्रतिस्पर्धा, जासूसी और मनावैज्ञानिक युद्ध जैसे तत्त्व शामिल थे।

- शीत युद्ध वास्तविक युद्ध नहीं था अपितु युद्ध का वातावरण था। **नेहरू** के शब्दों में- "शीत युद्ध का वातावरण निलंबित मृत्यु दंड के वातावरण के समान तनावपूर्ण था। यह गरम युद्ध से भी अधिक भयानक युद्ध था क्योंकि यह चिंतन, भावनाओं एवं मनोवेगों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता था।"
- **के.पी.एस. मेनन के अनुसार:** "शीत युद्ध, जैसा कि विश्व ने अनुभव किया, दो विचारधाराओं, दो पद्धतियों, दो गुटों, दो राज्यों और जब वह अपनी पराकाष्ठा पर था तो दो व्यक्तियों के मध्य उग्र संघर्ष था। दो विचारधाराएँ थीं- पूंजीवाद और साम्यवाद, दो पद्धतियाँ थीं- संसदीय लोकतंत्र बनाम बुर्जुआ जनतंत्र एवं सर्वहारा वर्ग की तानाशाही, दो गुट थे- नाटो और वारसा पैक्ट, दो राज्य थे- संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ और दो व्यक्ति थे- जोजफ स्टालिन और जॉन फॉस्टर डलेस।"

शीत युद्ध की प्रकृति/विशेषताएँ

- शीत युद्ध एक ऐसी स्थिति है जिसे मूलतः 'उष्ण शांति' (Hot Peace) कहा जाना चाहिये। ऐसी स्थिति में न तो पूर्ण रूप से शांति रहती है और न ही वास्तविक युद्ध होता है बल्कि शांति और युद्ध के बीच की अस्थिर स्थिति बनी रहती है।
- इस दौरान महाशक्तियाँ एक दूसरे से भयभीत रहती हैं, जिससे अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण ही नहीं बल्कि मानव समाज को क्षणभर में समाप्त कर देने वाले घातक प्रक्षेपास्त्रों के निर्माण की भी होड़ रहती है।
- यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें दोनों पक्ष परस्पर शांतिकालीन कूटनीतिक संबंध कायम रखते हुए भी शत्रु भाव रखते हैं। यह एक ऐसा युद्ध था जिसका रणक्षेत्र मानव का मस्तिष्क था। यह मनुष्यों के मनों में लड़ा जाने वाला युद्ध था। इस दृष्टि से इसे 'स्नायु युद्ध' (War of Nerves) भी कहा जा सकता है।

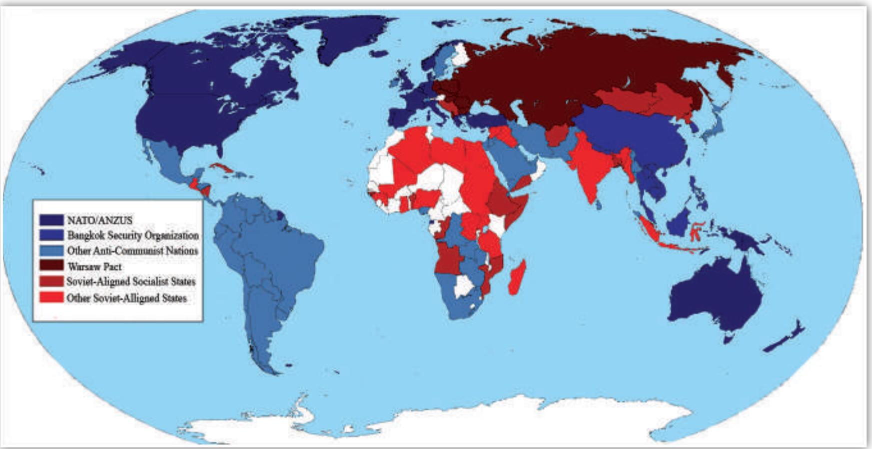

10

औपनिवेशिक शासन से मुक्ति
Liberation From Colonial Rule

अरब विश्व : मिस्र

पृष्ठभूमि

मिस्र अफ्रीका के उत्तर-पूर्व में नील नदी के तट पर बसा एक छोटा-सा देश है। यह पहले रोमन साम्राज्य के अधीन था। 7वीं सदी में अरब सेनाओं ने जीतकर इसे अपने अधीन कर लिया। इसके पश्चात् इस क्षेत्र में अरब संस्कृति (भाषा, साहित्य, रीति-रिवाज आदि) तथा इस्लाम का प्रसार हुआ। 16वीं सदी के आरंभ में यह क्षेत्र ऑटोमन (तुर्की) साम्राज्य के अधीन आ गया। ऑटोमन साम्राज्य के अंतर्गत मिस्र को एक विशेष स्थिति प्राप्त थी। उसके अपने शासक होते थे, जिन्हें 'खदीव' कहा जाता था, लेकिन वे ऑटोमन सुल्तान की अधीनता स्वीकार करते थे। 19वीं सदी में ऑटोमन सुल्तान का वर्चस्व अपने अवसान की ओर था या यूँ कहें कि अब वह नाममात्र का शासक रह गया था। सुल्तान स्वयं इतना कमज़ोर था कि वह मिस्र पर नियंत्रण रखने में अक्षम था।

यूरोपीय शक्तियों का प्रवेश

18वीं सदी के अंतिम चरण में मिस्र पश्चिमी यूरोपीय शक्तियों के चंगुल में फँसने लगा। मिस्र पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिये अंग्रेज़ों और फ्राँसीसियों के बीच संघर्ष शुरू हुआ। इस दिशा में पहला प्रयास नेपोलियन बोनापार्ट द्वारा 1798 ई. में किया गया और वह एक विशाल सेना लेकर मिस्र पहुँच गया। नेपोलियन ने प्रचारित किया था कि वह मिस्र में ऑटोमन प्रभुता कायम करेगा। किंतु उसके मिस्र अभियान का मूल उद्देश्य मिस्र पर कब्ज़ा कर ब्रिटेन के व्यापारिक मार्गों को अवरुद्ध करना तथा मिस्र को एक सैनिक अड्डे के रूप में उपयोग कर ब्रिटेन को उसके एशियाई उपनिवेश (उदाहरणस्वरूप-भारत) से बाहर निकालना था। लेकिन नेपोलियन को अपने उद्देश्यों में सफलता नहीं मिली। जनवरी 1799 ई. में मिस्र से नेपोलियन को निकालने के लिये ब्रिटेन, रूस और ऑटोमन सुल्तान के मध्य एक समझौता हुआ। अगस्त 1799 ई. में ही अत्यंत कठिन परिस्थितियों में नेपोलियन को मिस्र से वापस लौटना पड़ा। किंतु नेपोलियन क्रांति का वाहक एवं दूत था। उसने अपने मिस्र अभियान के दौरान मिस्र में नए विचारों के बीज बो दिये। इन विचारों ने कालांतर में मिस्र में आधुनिकीकरण एवं राष्ट्रवाद के विकास के लिये अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण किया। नेपोलियन के मिस्र से लौटने के पश्चात् भी उसकी सेना का एक हिस्सा वहाँ रुका हुआ था। किंतु मिस्र के लोगों के प्रतिरोध और प्राकृतिक प्रकोप (बीमारियाँ) ने फ्राँसीसी सेना को कमज़ोर बना दिया। ऐसी स्थिति में 1801 ई. में ऑटोमन साम्राज्य की सेनाओं ने ब्रिटेन की सहायता से फ्राँसीसियों को मिस्र से बाहर कर दिया। फ्राँसीसियों को मिस्र से भगाने वाली तुर्की सेना के ही एक अधिकारी मुहम्मद अली (या मेहमत अली) ने फ्राँसीसियों के पलायन के बाद उत्पन्न अव्यवस्था का लाभ उठाकर अपनी स्थिति मज़बूत कर ली और उसने 1805 ई. में स्वयं को मिस्र का शासक घोषित कर दिया।

मुहम्मद अली (मेहमत अली)

शासक बनने के पश्चात् मुहम्मद अली (शासन काल 1805–1848 ई.) ने आंतरिक विद्रोहियों का दमन किया और मिस्र को सशक्त एवं आधुनिक बनाने की दिशा में प्रयास आरंभ किये। वह तुर्की साम्राज्य की सेना पर श्रेष्ठता हासिल करके मिस्र राज्य के अस्तित्व को सुरक्षित रखना चाहता था। अतः उसने मिस्र की सेना को सुदृढ़ तथा शक्तिशाली बनाने हेतु अनेक सुधार लागू किये। उसने फ्राँसीसी सैन्य विशेषज्ञों की सेवाएँ लीं तथा पश्चिमी ढंग पर अपनी सेना को संगठित किया। उसने सैनिक अफसरों के प्रशिक्षण के लिये एक विद्यालय भी खोला। मुहम्मद अली ने मिस्र में आधुनिक शिक्षा की शुरुआत की। उसके प्रयास से शिक्षा को पहली बार धर्म से अलग अस्तित्व मिला। यूरोपीय प्राध्यापकों को मिस्र बुलाया गया तथा मिस्र के विद्यार्थियों को यूरोप के

18वीं शताब्दी का विश्व मानचित्र

11

विऔपनिवेशीकरण एवं अल्प विकास
Decolonization and Underdevelopment

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के अधिकांश देश स्वतंत्र हो गए। ये देश लंबे समय से साम्राज्यवादी देशों के औपनिवेशिक शासन के अधीन रहने के लिये मजबूर थे। इन देशों से औपनिवेशिक शासन की समाप्ति और औपनिवेशिक परतंत्रता से स्वाधीनता की स्थिति में आने की प्रक्रिया को ही विश्व इतिहास में विऔपनिवेशीकरण (Decolonization) की संज्ञा दी जाती है। इन उपनिवेशों की स्वतंत्रता मुख्यत: वहाँ की जनता के संघर्षों की देन थी, मगर द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अंतर्राष्ट्रीय वातावरण में हुए परिवर्तनों ने भी औपनिवेशिक जनता को स्वाधीनता दिलाने में मदद पहुँचाई।

औपनिवेशिक मुक्ति के पश्चात् नव-स्वतंत्र राष्ट्रों ने गुटीय राजनीति को छोड़कर अपनी स्वतंत्र पहचान कायम की। दूसरे शब्दों में दो गुटों में बँटे विश्व से स्वयं को अलग रखा। इसी कारण नवोदित राष्ट्रों को तृतीय विश्व (थर्ड वर्ल्ड) भी कहा गया। इस दृष्टि से विऔपनिवेशीकरण ने तृतीय विश्व के उदय में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उपनिवेशवाद की समाप्ति के लिये ज़िम्मेदार कारक

कई एशियाई देशों में राष्ट्रवादी आंदोलन का अस्तित्व द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले भी मौजूद था। द्वितीय विश्वयुद्ध से अनेक वर्ष पूर्व ही राष्ट्रवादी अपने-अपने देशों को विदेशी दासता से मुक्त कराकर वहाँ स्वदेशी सरकार की स्थापना हेतु संघर्ष कर रहे थे। यद्यपि पश्चिमी औपनिवेशिक शक्तियाँ अपने उपनिवेशों में पाश्चात्य सभ्यता के लाभों को पहुँचाने का दावा करती थीं, किंतु उपनिवेशों की जनता औपनिवेशिक नीतियों एवं शासन को अपने शोषण का मुख्य कारण मानती थीं। औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध जनाक्रोश तथा पाश्चात्य-आधुनिक विचारों के उपनिवेशों में प्रसार के साथ-साथ अन्य कारकों ने मिलकर राष्ट्रवादी आंदोलनों के उद्भव की पृष्ठभूमि का निर्माण किया। ये राष्ट्रवादी आंदोलन ही विऔपनिवेशीकरण की प्रक्रिया के लिये मुख्य ज़िम्मेदार कारक थे। राष्ट्रवादी आंदोलनों ने औपनिवेशिक शासन पर आंतरिक दबाव के रूप में कार्य किया। उपनिवेशवाद की समाप्ति के कारकों को निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है-

द्वितीय विश्वयुद्ध का प्रभाव

- युद्ध के फलस्वरूप साम्राज्यवादी शक्तियाँ बहुत कमज़ोर हो गई थीं। अनेक साम्राज्यवादी देशों की अर्थव्यवस्था को धक्का लगा था। सबसे बड़े साम्राज्य के मालिक ब्रिटेन की अर्थव्यवस्था भी युद्ध के कारण जर्जर हो गई थी। फासीवाद के उन्मूलन के क्रम में यूरोप के साम्राज्यवादी देशों की सैनिक शक्ति भी छिन्न-भिन्न हो गई। इस प्रकार आर्थिक व सैन्य दोनों ही दृष्टिकोण से साम्राज्यवादी देश द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व की तुलना में बहुत कमज़ोर हो गए थे। उनकी इस कमज़ोरी ने उपनिवेशों पर नियंत्रण रखने की उनकी क्षमता और इच्छा, दोनों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया।
- विश्वयुद्ध में शामिल एशियाई व अफ्रीकी लोग सामाजिक और आर्थिक रूप से अधिक जागरूक बन चुके थे। युद्ध के दौरान घोषित 1941 ई. के अटलांटिक चार्टर में राष्ट्रीय स्वतंत्रता, अस्तित्व तथा आत्मनिर्णय के अधिकार को मान्यता दी गई थी। जब युद्ध के दौरान अमेरिकी राष्ट्रपति रूज़वेल्ट ने यह स्पष्ट किया कि अटलांटिक चार्टर मात्र जर्मनी द्वारा उत्पीड़ित लोगों पर ही नहीं बल्कि विश्व के सभी लोगों पर लागू होता है, तब एशिया और अफ्रीका में उपनिवेशवाद विरोधी संघर्ष में नवजीवन का संचार हुआ। राष्ट्रवादी उत्साह से भर उठे और राष्ट्रवादी आंदोलनों को गति मिली।
- द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद बदले हुए राजनीतिक वातावरण में अब साम्राज्यवाद को श्रेष्ठ सभ्यता की निशानी नहीं माना जाता था। अब हर जगह, यहाँ तक कि साम्राज्यवादी देशों में भी साम्राज्यवाद को पशुता, अन्याय और शोषण का पर्याय माना जाने लगा। ऐसे में साम्राज्यवादी देशों में भी औपनिवेशिक शासन कायम रखने के प्रयत्न लोकप्रिय नहीं रहे। अधिकांश फ्राँसीसी जनता ने फ्राँस द्वारा लड़ी गई औपनिवेशिक लड़ाइयों का विरोध किया। 1956 ई. में जब ब्रिटेन ने फ्राँस और इज़राइल के साथ मिलकर मिस्र पर आक्रमण किया तो ब्रिटेन में व्यापक स्तर पर सरकार विरोधी प्रदर्शन हुए।
- युद्ध से पूर्व उपनिवेशों की जनता यूरोपीय सेना को अपराजेय मानती थी, किंतु युद्ध के आरंभिक चरण में जापानी सेनाओं की सफलता ने इस मिथक को चकनाचूर कर दिया। जापानियों ने बहुत तेजी के साथ मलाया, सिंगापुर, बर्मा, हिंद-चीन आदि क्षेत्रों पर कब्ज़ा कर लिया था। हालाँकि अंत में जापानियों को हार का सामना करना पड़ा, किंतु इन क्षेत्रों के राष्ट्रवादी समूहों ने छापामार युद्ध नीति (जो अब तक जापानियों के विरुद्ध प्रयोग की जा रही थी) का प्रयोग यूरोपीय शक्तियों के विरुद्ध चलाए गए स्वतंत्रता आंदोलन में किया।
- द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान विभिन्न सरकारों को सैनिक और असैनिक समस्याओं के समाधान के लिये अनेक उपाय करने पड़े थे। सरकार और जनता के बीच सीधा संपर्क स्थापित हुआ। सरकार ने चिकित्सा, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में जनता के हित में आधिकाधिक हस्तक्षेप करना शुरू किया। इस प्रकार कल्याणकारी राज्य की भावना का उदय हुआ। 1942 ई. की ब्रिटेन की बेवरिज रिपोर्ट, राज्य की कल्याणकारी भावना का द्योतक थी।

12

यूरोप का एकीकरण
Unification of Europe

20वीं शताब्दी में दो महायुद्धों के बीच हुए परिवर्तनों ने यूरोप के विभाजन को और तीव्र कर दिया। यह विभाजन जहाँ तक एक तरफ वैचारिक रहा, वहीं दूसरी तरफ इसमें राजनीतिक शासन प्रणाली के आधार पर भी विभेद दिखाई पड़ा। इस विभाजन ने यूरोपीय राष्ट्रों को युद्ध में आमने-सामने खड़ा कर दिया और उनकी आर्थिक गतिविधियों पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाला। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व रंगमंच से यूरोप का पटाक्षेप हो गया। अतः अपने अस्तित्त्व की रक्षा के लिये यूरोपीय एकता को सुदृढ़ करना ज़रूरी समझा गया। इसके लिये विविध आर्थिक और राजनीतिक संगठन बनाए गए। इन उपायों के माध्यम से सामूहिक प्रयत्न के द्वारा ही यूरोपीय राष्ट्रों ने अपनी समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने का प्रयत्न किया। वास्तव में यूरोप के एकीकरण की प्रक्रिया की शुरुआत तो पश्चिम यूरोपीय राष्ट्रों को एक सूत्र में पिरोए रखने हेतु नाटो की स्थापना के साथ ही हुई। आगे चलकर यूरोपीय समुदाय और उसके विभिन्न अंगों के निर्माण ने अभी तक जारी एकीकरण को प्रभावी दिशा प्रदान की।

यूरोपीय परंपरा

- यूरोपीय महाद्वीप की भौगोलिक-सांस्कृतिक एकता इतिहास में निरंतर झलकती रही है। यह अकेला ऐसा महाद्वीप है जिसकी जनसंख्या जातीय आधार पर या धार्मिक मान्यता के अनुसार एशिया या अफ्रीका जैसे अन्य पुरानी दुनिया के महाद्वीपों की तुलना में एकरस रही है। कोई बहुत ऊँची पर्वत शृंखला या नौकायन में दिक्कत पैदा करने वाली नदियाँ, मरुस्थल या जंगल यूरोपीय महाद्वीप में ऐसी प्राकृतिक बाधाएँ प्रस्तुत नहीं करते जो आवागमन में रुकावट पेश करती हों। बड़े-बड़े विख्यात कलाकार, प्रतिभाशाली वैज्ञानिक, चिंतक, दार्शनिक, अध्यापक एक राज्य के आश्रयदाता से दूसरे राज्य के आश्रयदाता तक बहुत आसानी से अपनी पहुँच बना सकते थे।
- यूरोप की एकता को विकसित करने में निश्चय ही प्राचीन काल में यूनानियों और रोमनों ने तथा मध्य युग में ईसाई धर्म ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। ब्रिटेन से लेकर रूस की सरहद तक सभी जगह यूनानियों को पश्चिमी सभ्यता का जनक माना जाता है। सुकरात, प्लेटो और अरस्तू जैसे दार्शनिक हों या फिर पाइथागोरस और आर्कमिडीज जैसे वैज्ञानिक, इन्हें पूरा पश्चिमी जगत शास्त्रीय कसौटी के रूप में स्वीकार करता है। ग्रीक महाकाव्यों का अध्ययन एवं उनकी शैली का अनुकरण यूरोप के सभी देशों में शिक्षा का आधार समझे जाते रहे हैं। होमर द्वारा रचित महाकाव्य 'ओडिसी' या 'इलियड' हो या सोफोकिलिस के दुखांत नाटक। साहित्य के क्षेत्र में शिल्प और शैली का आदर्श भी प्राचीन यूनानी कलाकृतियाँ ही समझी जाती हैं। सत्ता, स्वतंत्रता, मनुष्य जीवन, अर्थ, नैतिकता और न्याय, जनतंत्र विषयक बुनियादी स्थापनाओं का श्रेय यूनानी चिंतकों को ही दिया जाता है। इस सांस्कृतिक विरासत में साझेदारी के कारण यूरोप के निवासी अपनी पहचान विश्व की दूसरी प्रमुख सभ्यताओं से फर्क करने के लिये करते रहे हैं। यह यूनानी सभ्यता प्राचीन मिस्र, सुमेर, ईरान, भारत और चीन की सभ्यता से भिन्न थी।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् यूरोप का विभाजन

13 सोवियत संघ का विघटन एवं एकध्रुवीय विश्व

Disintegration of Soviet Union and Unipolar World

सोवियत संघ का विघटन

1990 के दशक के प्रारंभ में सोवियत संघ का विघटन विश्व इतिहास की एक प्रमुख घटना है। यद्यपि इस विघटन के लिये अक्सर गोर्बाचेव की नीतियों को ज़िम्मेदार माना जाता है, तथापि विघटन के बीज सोवियत संघ के गठन तथा 1917 ई. की बोल्शेविक क्रांति के पश्चात् सोवियत संघ में विकसित साम्यवादी राजनीतिक-आर्थिक व्यवस्था में पहले से ही विद्यमान थे। सोवियत संघ के विघटन का प्रभाव न केवल 20वीं सदी में, बल्कि वर्तमान में भी महसूस किया जाता है।

सोवियत संघ की पृष्ठभूमि एवं इसके विघटन के लिये ज़िम्मेदार कारकों को निम्न रूपों में व्यक्त किया जा सकता है-

पृष्ठभूमि

1917 ई. की रूसी क्रांति से रूसी साम्राज्य के जार (सम्राट) को सत्ता से बेदखल कर दिया गया और व्लादिमीर लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविक पार्टी ने सत्ता पर कब्ज़ा कर लिया। यह दुनिया की पहली साम्यवादी सरकार थी। इस घटना को 'अक्तूबर क्रांति' का नाम दिया गया, किंतु इसके तुरंत बाद ही बोल्शेविक पार्टी क्रांति विरोधी शक्तियों के साथ गृहयुद्ध में उलझ गई। बोल्शेविकों की लाल सेना ने गृहयुद्ध के दौरान कई ऐसे राज्यों पर भी कब्ज़ा कर लिया जिन्होंने जार के पतन का लाभ उठाकर स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर दिया था। बोल्शेविकों की जीत पूर्ण होने के उपरांत रूस के साथ ऐसे ही कुछ राज्यों- यूक्रेन, बेलारूस तथा ट्रांस-कॉकेशस क्षेत्र को मिलाकर दिसंबर 1922 ई. में सोवियत संघ की स्थापना की घोषणा कर दी गई। कालांतर में इसमें अन्य गणराज्य भी जुड़ते चले गए।

विघटन के कारक

ऐतिहासिक कारक

सोवियत संघ की स्थापना के पश्चात् सोवियत संघ के प्रमुख स्टालिन के दौर (1924–53 ई.) में सोवियत गणराज्यों में साम्यवादी आदर्शों पर आधारित राजनीतिक-आर्थिक व्यवस्थाओं को कठोरतापूर्वक आरोपित किया गया। इसी दौर में, द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् पूर्वी यूरोप के वैसे देशों में, जिन्हें सोवियत सेना ने फासीवादी ताकतों से मुक्त करवाया था, साम्यवादी शासन प्रणाली की स्थापना की गई। ऊपर से आरोपित इस व्यवस्था को न ही सोवियत गणराज्यों ने पूर्ण उत्साह व इच्छा से अपनाया गया और न ही पूर्वी यूरोप के देशों ने।

राजनीतिक कारक

राजनीतिक दृष्टिकोण से सभी गणराज्यों को एकता के सूत्र में पिरोने का कार्य रूसी कम्युनिस्ट पार्टी कर रही थी। रूसी कम्युनिस्ट पार्टी का दबदबा सोवियत संघ की राजनीतिक संरचना पर कायम था। सभी गणराज्यों में इसकी शाखाएँ थीं। विभिन्न गणराज्यों से सुप्रीम सोवियत (एक प्रकार की संसद) के लिये जिन सदस्यों का चुनाव होता था वे भी साम्यवादी पार्टी के ही होते थे। इसके आधार पर एक अतिकेंद्रीकृत राजनीतिक व्यवस्था का निर्माण किया गया था। ऐसी राजनीतिक संरचना को परिधीय क्षेत्रों में स्थित गणराज्यों (जैसे- जॉर्जिया, यूक्रेन, अर्मेनिया, लाटविया आदि) ने कभी स्वेच्छा से स्वीकार नहीं किया। फलत: असंतोष के तत्त्व हमेशा मौजूद रहे। जब भी स्थानीय जनता या नेता द्वारा शासन का विरोध किया जाता तो उस विरोध को कभी केजीबी (गुप्तचर संस्था) तो कभी लाल सेना (रूसी सेना) के द्वारा दबा दिया जाता। इस प्रकार आतंक का

Think IAS **दृष्टि** *The Vision* Think Drishti

दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम (Distance Learning Programme)

इस कार्यक्रम के अंतर्गत आप घर बैठे 'दृष्टि' द्वारा तैयार परीक्षोपयोगी पाठ्य-सामग्री मंगवा सकते हैं। यह पाठ्य-सामग्री विशेष रूप से ऐसे अभ्यर्थियों को ध्यान में रखकर तैयार की गई है जो दिल्ली आकर कक्षाएँ करने में असमर्थ हैं। इस कार्यक्रम के अंतर्गत सिविल सेवा और राज्य सेवा (उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, उत्तराखंड पी.सी.एस.) परीक्षाओं की पाठ्य-सामग्री उपलब्ध कराई जाती है। यह पाठ्य-सामग्री प्रत्येक परीक्षा के नवीनतम पाठ्यक्रम के अनुरूप है और इसे विभिन्न समसामयिक घटनाओं, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं एवं समितियों की रिपोर्टों के माध्यम से अद्यतन (up-to-date) किया गया है।

UPSC सिविल सेवा परीक्षा के लिये (हिंदी माध्यम में)

सामान्य अध्ययन (प्रारंभिक परीक्षा)
(19 बुकलेट्स) ₹10,000/-

सामान्य अध्ययन (मुख्य परीक्षा)
(26 बुकलेट्स) ₹13,000/-

इतिहास (वैकल्पिक विषय)
(12 बुकलेट्स) ₹7,000/-

सामान्य अध्ययन + सीसैट (प्रारंभिक परीक्षा)
(27 बुकलेट्स) ₹13,000/-

सामान्य अध्ययन (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(31 बुकलेट्स) ₹15,000/-

दर्शनशास्त्र (वैकल्पिक विषय)
(4 बुकलेट्स) ₹5,000/-

सामान्य अध्ययन + सीसैट (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(39 बुकलेट्स) ₹17,500/-

हिन्दी साहित्य (वैकल्पिक विषय)
(13 बुकलेट्स) ₹7,000/-

उत्तर प्रदेश पी.सी.एस. (UPPCS) के लिये

सामान्य अध्ययन + सीसैट (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(33 + 10 बुकलेट्स) (₹15,500/-)

सामान्य अध्ययन (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(33 बुकलेट्स) (₹14,000/-)

मध्य प्रदेश पी.सी.एस. (MPPCS) के लिये

सामान्य अध्ययन + सीसैट (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(28 + 8 बुकलेट्स) (₹11,000/-)

सामान्य अध्ययन (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(28 बुकलेट्स) (₹10,000/-)

राजस्थान पी.सी.एस. (RAS/RTS) के लिये

सामान्य अध्ययन (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(34 बुकलेट्स) ₹10,500/-

बिहार पी.सी.एस. (BPSC) के लिये

सामान्य अध्ययन (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(25 बुकलेट्स) ₹10,000/-

उत्तराखंड पी.सी.एस. (UKPSC) के लिये

सामान्य अध्ययन (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(28 बुकलेट्स) (₹10,000/-)

सामान्य अध्ययन + सीसैट (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(28 + 8 बुकलेट्स) (₹11,000/-)

छत्तीसगढ़ पी.सी.एस. (CGPSC) के लिये

सामान्य अध्ययन (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(35 बुकलेट्स) (₹14,000/-)

सामान्य अध्ययन + सीसैट (प्रा.+ मुख्य परीक्षा)
(35 + 6 बुकलेट्स) (₹15,500/-)

For UPSC CSE (in English Medium)

Self Learning Modules

Students may opt for following modules

- **Prelims** (17 GS + 3 CSAT Booklets) ₹10000/-
- **Prelims + Mains** (35 GS + 3 CSAT Booklets) ₹15000/-
- **Mains** (17 GS Booklets) ₹11000/-

Offer Free 6 months subscription of Drishti Current Affairs Today magazine with

For UPPCS Mains (in English Medium)

Self Learning Modules

19 GS + 1 Essay + 1 Compulsory Hindi Booklets
₹11000/-

Offer *Free 6 months subscription of Drishti Current Affairs Today magazine for comprehensive coverage of current affairs*

विस्तृत जानकारी के लिये कॉल करें : 8448485520, 87501-87501, 011-47532596

दृष्टि पब्लिकेशन्स की प्रमुख पुस्तकें

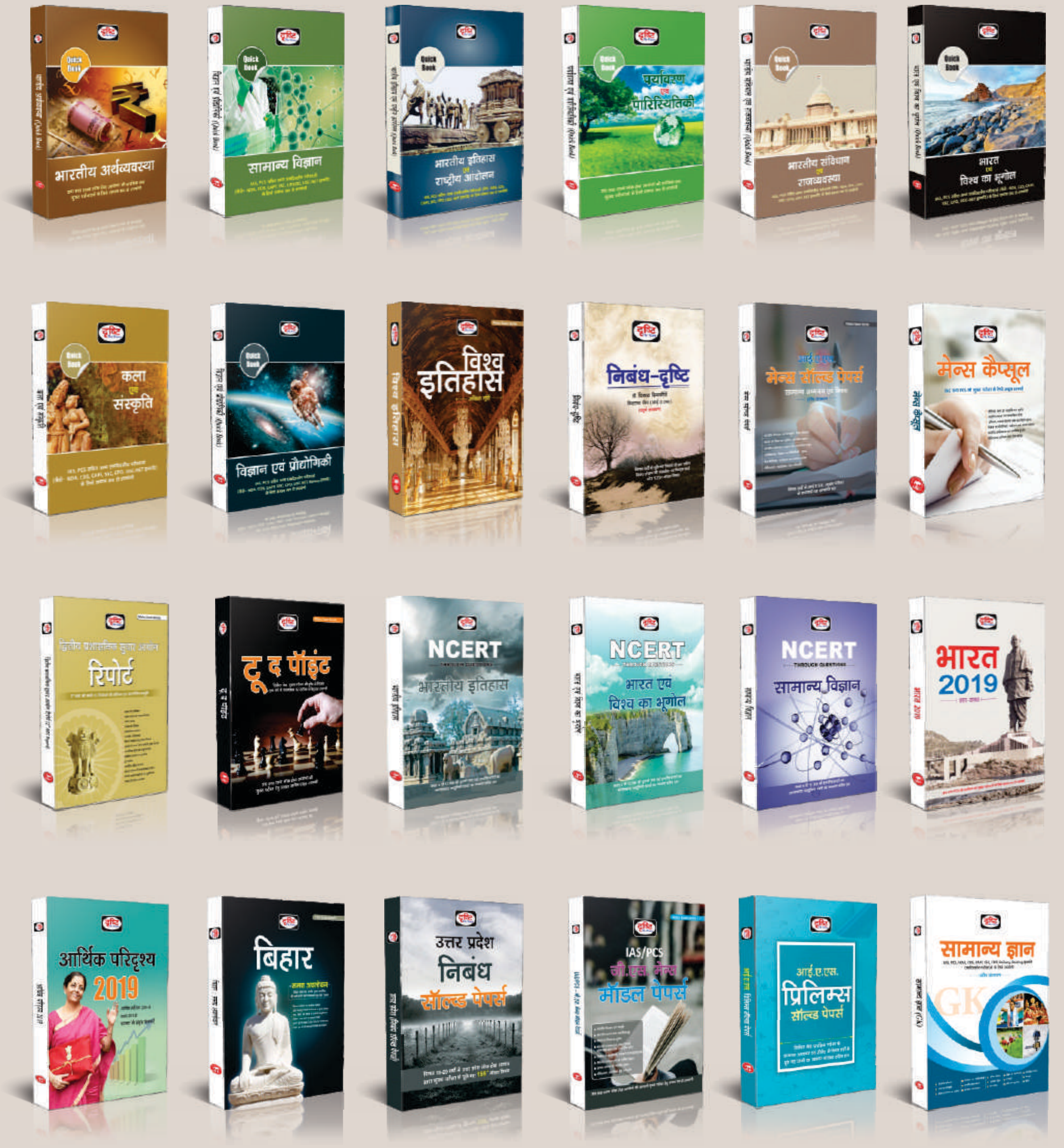

Drishti Publications dlp

drishti

641, Ist Floor, Dr. Mukherji Nagar, Delhi-9
Ph.: 011-47532596, 87501 87501
Website: www.drishtipublications.com, www.drishtiias.com
E-mail: info@drishtipublications.com

ISBN 978-81-937195-8-9

9 788193 719589

मूल्य : ₹ 310